धर्मायण

(धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका)

मूल्य : 45 रुपये

अंक 124

कार्तिक,

2079 वि. सं.

यम विशेषांक

आवरण चित्र परिचय पृ. 2 पर

धर्मायण

Title Code–BIHHIN00719

आलेख –सूची

1. यमः संयमनात्	-सम्पादकीय	3
2. मृत्युदेव की मनोहारिता	-श्री महेश प्रसाद पाठक	4
3. यम प्रतिमा के लक्षण और सूक्ष्म विवेचन	-डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'	13
4. यमदंष्ट्रा काल से सावधान!	-डॉ. विनोद कुमार जोशी	23
5. वेद-पुराण में यम के अर्थ	-श्री अरुण कुमार उपाध्याय	30
6. 'प्रेत' शब्द का विमर्श तथा 'यमगीता'	-डॉ. सुदर्शन श्रीनिवास शाण्डिल्य	36
7. आत्मतत्त्व के उपदेशक यमराज	-डॉ. कवीन्द्र नारायण श्रीवास्तव	40
8. नचिकेता और यमराज के संवाद का आत्म-दर्शन	-डॉ. राजेन्द्र राज	43
9. प्रभात फेरी की शुरुआत कैसे हुई	-श्री गोवर्धन दास बिन्नाणी 'राजा बाबू'	47
10. मगध क्षेत्र में यम द्वितीया- भैया दूज	- श्रीमती आरती मिश्रा 'मानव'	50
11. लोकाचार में शास्त्रीयता- यमद्वितीया के सन्दर्भ में	- श्रीमती रंजू मिश्रा	54
12. चित्रगुप्त पूजा एवं भैया दूज	- सुश्री पुनीता कुमारी श्रीवास्तव	60
13. 'अनर्घराघव' की रामायण-कथा	आचार्य सीताराम चतुर्वेदी	67
14. 19वीं शती की कृति 'रीतिरत्नाकर' में		
15. पर्व-त्योहारों का विवरण (संकलित)		70
16. पुस्तक समीक्षा- 'प्रवचन' ले. मार्कण्डेय शारदेय		75
17. महावीर मन्दिर समाचार आदि		77

पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखक के हैं। इनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है। हम प्रबुद्ध रचनाकारों की अप्रकाशित, मौलिक एवं शोधपरक रचनाओं का स्वागत करते हैं। रचनाकारों से निवेदन है कि सन्दर्भ–संकेत अवश्य दें।

धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका

अंक 124

कार्तिक, 2079 वि. सं.

10 अक्टूबर–8 नवम्बर, 2022ई.

प्रधान सम्पादक

आचार्य किशोर कुणाल

सम्पादक

भवनाथ झा

पत्राचार :

महावीर मन्दिर,

पटना रेलवे जंक्शन के सामने

पटना–800001, बिहार

फोन: 0612–2223798

मोबाइल: 9334468400

E–mail:

dharmayanhindi@gmail.com

Website:

www.mahavirmandirpatna.org/dharmayan/

Whatsapp:

9334468400

मूल्य : 45 रुपये

पाठकीय प्रतिक्रिया

(अंक संख्या 123, आश्विन, 2079 वि.सं.)

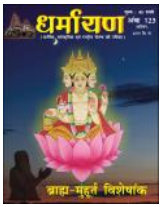

'धर्मायण' का 'ब्राह्म मुहूर्त विशेषांक' एवं इसके पूर्व 'कुश विशेषांक'– दोनों ही बहुत प्रेरक एवं ज्ञानवर्द्धक अंक हैं। कुश विषय पर इससे पहले प्रकाशन हेतु किसी का ध्यान आकृष्ट हुआ हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। मानव जीवन के सारे संस्कारों से अभिन्न पदार्थ– कुश पर प्रथमतः गवेषणापूर्ण आलेख पढ़ने को मिले।

'ब्राह्म-मुहूर्त्त' जैसे गंभीर विषय पर सांगोपांग विवेचन भी अन्यत्र दुर्लभ है। 24 घंटे का समय विभाजन एवं मुहूर्त्तों के नामकरण के साथ-साथ ब्राह्म मुहूर्त्त में किए जाने वाले प्रातःकालीन कृत्यों– संध्योपासनादि का महत्त्व एवं उसकी अनिवार्यता संकेतित है। यह समय ब्रह्मचारियों एवं विद्यार्थियों के लिए अध्ययन व मनन-चिन्तन की वेला है, उषाकाल में शय्या-त्याग एवं शुद्ध वायु का सेवन विभिन्न दृष्टिकोणों से स्वास्थ्य के लिए हितकर है –जैसे विषय विस्तार से गुंफित हैं।

'ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत्' आलेख के अन्तर्गत ब्राह्म मुहूर्त्त की परिभाषा, रात्रिकाल के समस्त मुहूर्तों का विवेचन तथा प्रातः जागरण के बहुआयामी सकारात्मक प्रभावों आदि का विशद पर्यालोचन हुआ है। इसके अतिरिक्त प्रस्तावित विषय से भिन्न आलेख– गद्य एवं पद्य रुचिकर सारगर्भित हैं।

अनन्त व्रत की हृदयग्राही कथा का लोकभाषा में पद्यानुवाद बहुत ही लोकरंजक और सरल बोधगम्य है। अन्य सभी रचनाएँ उत्कृष्ट कोटि की हैं।

ऐसे गंभीर विषयों का चयन एवं शोधित्सु प्रणेताओं के उच्चस्तरीय आलेखों का संकलन सतत अनुसंधान-रत सम्पादक महोदय श्री भवनाथजी के परिश्रम व अध्यवसाय का सत्परिणाम है जिससे जिज्ञासु पाठक निरन्तर पत्रिका द्वारा लाभान्वित हो रहे हैं।

धर्मायणो जयतु।

दामोदर पाठक, (अ. प्रा. प्राचार्य),
लखारी, हनुमान मन्दिर के निकट, पो. पचंबा,
गिरिडीह (झारखंड)

आपको यह अंक कैसा लगा? इसकी सूचना हमें दें। पाठकीय प्रतिक्रियाएँ आमन्त्रित हैं। इसे हमारे ईमेल dharmayanhindi@gmail.com पर अथवा ह्वाट्सएप सं.–+91 9334468400 पर भेज सकते हैं।

'धर्मायण' का अगला अंक **हेमन्त ऋतु अंक** के रूप में प्रस्तावित है। हेमन्त ऋतु का महत्त्व प्राचीन काल में तो था ही, आज के परिप्रेक्ष्य में भी धान कटने का मास होने के कारण लोक-शास्त्र तथा संस्कृति में महत्त्वपूर्ण है। अग्रहायण शब्द वर्ष के आरम्भ का भी संकेत करता है। इसी मास में नवान्नभक्षण की वैदिक परम्परा है। नवान्न विधि की लोक-परम्परा आज भी बची हुई है। किसान धान की खेत के पास जाकर उस अन्न की पूजा करते हैं। अगहन मास के महत्त्व को देखकर ही शायद श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है- मासानां मार्गशीर्षोऽहम्। इस मास से सम्बन्धित वैदिक, पौराणिक तथा लौकिक महत्त्व से सम्बद्ध आलेख आमन्त्रित हैं।

आवरण चित्र परिचय

जे. जे. चाब्रेली, बरनॉफ (1827ई.) द्वारा लिखित पुस्तक 'ला इण्डे फ्रांकासी, ओउ कलेक्सन द डेजाइन लियोग्राफीज', पेरिस से प्रकाशित पुस्तक में यह चित्र है। इसके सूर्य का आभा मण्डल वर्तमान आवरण के लिए जोड़ा गया है।

सम्पादकीय

यमः संयमनात्

—भवनाथ झा

मृत्यु के देवता यम हैं। संसार में मृत्यु परिजनों के शाश्वत वियोग का पर्याय है तो निश्चित रूप से इसके देवता के प्रति भी एक भय का भाव रहेगा। यमलोक की प्रताड़ना का विवरण भी हमें अनेक पुराणों में मिल जाते हैं, जिनका उद्देश्य है कि हम इस संसार में कोई भी अनैतिक कार्य न करें। यह पुराणों की मित्रसम्मत उपदेश की शैली है। इसे हम प्ररोचना तथा विरोचना कह सकते हैं। यह भी सत्य है कि यदि हम भगवद्भक्ति से यम की यंत्रणा से मुक्ति का कहीं कथन पाते हैं तो यह भगवद्भक्ति के प्रति हमें प्रेरित करने का पौराणिक प्रयास है। वहाँ यमलोक की प्रताड़ना का प्रतिपादन अभीष्ट नहीं है। इस सन्दर्भ में हमें पौराणिक देवता यमराज को देखना चाहिए, क्योंकि वे आखिर में संयम के देवता हैं; योग के आठ अंग में से जिस प्रथम अंग यम की चर्चा की गयी है, उसी यम के दिव्य स्वरूप यमराज सिद्ध होते हैं।

पुराणों में गरुड़ पुराण के उत्तरखण्ड के रूप में 24 अध्यायों वाले प्रेतकल्प ने यम के स्वरूप को काफी विकृत किया है। लेकिन यह भी एक सच्चाई है कि श्राद्ध तथा अंत्येष्टि विषय पर संग्रह करने वाले लक्ष्मीधर, हेमाद्रि, मित्रमिश्र यहाँ तक कि कमलाकर ने भी प्रचलित प्रेतकल्प का उपयोग नहीं किया है। यह संदेह उत्पन्न करता है कि उनके काल में क्या यह ग्रन्थ नहीं था। 17वीं शती से पूर्व के पद्धतिकारों ने इसका उपयोग नहीं किया है।

फिर, 16 अध्यायों वाला गरुड़पुराण सारोद्धार का एक संस्करण 1906ई. में नौनिधिशर्मा के सम्पादन में आया। इसने तो और हद कर दी। आरम्भ से 6 अध्यायों में केवल पापियों के दण्डस्वरूप जो -जो यातनाएँ कही गयीं थीं, उन्हें सातवें अध्याय में पापियों के साथ-साथ अपुत्रों के लिए भी जोड़ दिया। तथा श्राद्ध विधि की जितनी प्राचीन पद्धतियाँ थीं सारी धूमिल हो गयीं। इस सारोद्धार का अंग्रेजी में अनुवाद अर्नेस्ट वूड और एस.वी. सुब्रह्मण्यम् ने किया। गीताप्रेस ने भी इसे हिन्दी अनुवाद के साथ छाप दिया। सामान्य पाठक इसी को परमसत्य मानने लगे। इसके कारण काफी भ्रान्तियाँ फैलीं। आज आवश्यकता है कि लक्ष्मीधर से लेकर कमलाकर तक के जो श्राद्धसम्बन्धी प्रसंग हैं उनके साथ पहगले 24 अध्यायों वाले प्रेतकल्प की तुलना की जाये तथा इस प्रेतकल्प के साथ सारोद्धार की तुलना की जाये। तब हमें ज्ञात होगा कि 17वीं से 19वीं शती के अन्त तक किस प्रकार प्रक्षेपों एवं परिवर्तनों के कारण यम, यमलोक, पितर, विश्वेदव, श्राद्ध आदि के प्रसंग में भ्रान्तियाँ उत्पन्न हुईं, जिनके आधार पर दयानंद सरस्वती ने श्राद्ध का विरोध किया।

अतः यम के सम्बन्ध में तात्त्विक विवेचन की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था। यहाँ हमने विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत ठोस साक्ष्यों से संबलित लेखों का संकलन किया है। आशा करता हूँ कि सुधी पाठकगण इसका लाभ लेंगे।

मृत्युदेव की मनोहारिता

श्री महेश प्रसाद पाठक
"गार्ग्यपुरम्" श्रीसाईं मन्दिर के पास, बरगण्डा,
पो– जिला–गिरिडीह, (815301), झारखण्ड,
Email: pathakmahesh098@gmail.com

वेद एवं पुराणों में समान रूप से वर्णित यम को राजा कहा गया है। वे मनुष्य के संयम के राजा हैं। इसलिए शंकराचार्य ने संयमनात् यमः व्युत्पत्ति की है और यमराज का यह सार्वभौम स्वरूप है। यहाँ वेद, प्रातिशाख्य, कोष, पुराण आदि आधारों पर यम के स्वरूप तथा परिवार का वर्णन किया गया है। यहाँ हम देखते हैं कि यह लोकपाल हैं, वे मनुष्यों को कर्तव्य तथा अकर्तव्य का ज्ञान कराते हैं। कर्तव्य करने वालों को पुरस्कार तथा हत्या, अपहरण, बलात्कार, परनिन्दा, परपीड़न आदि निषिद्ध एवं प्रतिबन्धित कर्मों को करने वालों को दण्ड देते हैं। दण्डस्वरूप ऐसे कार्य करने वालों को यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। यहाँ हमें उनके परिवार का विशेष विवरण पढ़ने को मिलेगा।

यम का वैदिक स्वरूप

मृतकों पर शासन करने वाले सूर्यपुत्र यमदेव एक वैदिक देव के रूप में प्रतिष्ठित हैं। ऋग्वेद के दशम मण्डल का चौदहवाँ सूक्त 'यमसूक्त' कहलाता है, जिसमें एक स्थान पर इन्हें राजा कहा गया है। ये एक ऐसे राजा हैं, जो मृतकों पर शासन करते हैं।[1] ये हमारे समस्त शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य कर्मों के ज्ञाता, उत्तम पुण्यकर्मों के करने वालों को सुखद स्थान में ले जाने वाले, एक न्यायाधीश की भाँति पूर्णज्ञानी, मर्त्यों (मनुष्यों) के स्वामी एवं समस्त पृथ्वी का इन्हें अधिपति कहा गया है। यम व्यक्तियों को एकत्रित करने वाले[2] मृतकों को विश्राम प्रदान करने वाले[3] एवं उनके लिये आवास निर्मित करने वाले हैं।[4] अग्नि सहित देवों की गणना में यम का भी उल्लेख मिलता है।[5]

1. ऋग्वेद : 10.16.1 : मैनमग्ने वि दहो माभि शोचो मास्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेमेनं प्र हिणुतात्पितृभ्यः॥1॥
2. ऋग्वेद : 10.14.1– परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम्। वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ॥1॥
3. ऋग्वेद : 1014.9– अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन्। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै ॥9॥ अथर्व : 18.1.55
4. ऋग्वेद : 10.18.13 उत्ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत्परीमं लोगं निदधन्मो अहं रिषम्। एतां स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादना ते मिनोतु ॥13॥
5 ऋग्वेद : 10.64.3– नरा वा शंसं पूषणमगोह्यमग्निं देवेद्धमभ्यर्चसे गिरा। सूर्यामासा चन्द्रमसा यमं दिवि त्रितं वातमुषसमक्तुमश्विना ॥3॥

प्रातिशाख्यों में यम के बारे में विशेष विचार वैशिष्ट्य का भी वर्णन मिलता है। यम का अर्थ है– जोड़ा या जोड़े में से एक। तैत्तिरीय संहिता[6], ऐतरेय ब्राह्मण[7] में यम को 'राजन्' के रूप में संबोधित करते हुए 'यम' शब्द का प्रयोग यमराज के लिए प्रयुक्त हुआ है।

प्रातिशाख्यों में वर्णों की संज्ञा 'यम'

ऋग्वैदिक प्रातिशाख्य के अनुसार 'यम' वर्ण उच्चारण-स्थान के दृष्टिकोण से नासिका के साथ पूर्ववर्ती वर्ण से भी उच्चारित होता है, जिससे एक ही वर्ण दो उच्चारण स्थानों में जुड़ा होने के कारण जोड़े की तरह कार्य करता है, इसलिए 'यम' कहलाता है। तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, वाजसनेयि-प्राति-शाख्य आदि प्रतिशाख्यों के अनुसार अननुनासिक स्पर्श वर्ण के बाद अनुनासिक स्पर्श वर्ण हो, तो उन दोनों के मध्य में अननुनासिक स्पर्श के अतिरिक्त एक 'नासिक्य' वर्ण का आगम हो जाता है– जिसे 'यम' कहा जाता है। अननुनासिक तथा अनुनासिक स्पर्श के मध्य में आगम होने से एक अननुनासिक स्पर्श के स्थान पर दो (जोड़ा) हो जाता है, उस जोड़े में से एक (द्वितीय) 'यम' कहलाता है।[8]

"विवस्वान् के कनिष्ठ पुत्र को गीता में श्रीकृष्ण ने इन्हें अपना स्वरुप बतलाया है- 'यमः संयमतामहम्।'

यम का अर्थ

अमरकोश में यम के 14 नाम इस प्रकार बतलाये गये हैं–

धर्मराजः पितृपतिः
समवर्ती परेतराट्।
कृतान्तो यमुनाभ्राता
शमनो यमराड्यमः।।
कालो दण्डधरः
श्राद्धदेवो वैवस्वतोऽन्तकः।'[9]

'धर्मराज, पितृपति, समवर्ती, परेतराट्, कृतान्त, यमुनाभ्राता, शमन, यमराज, यम, काल, दण्डधर, श्राद्धदेव, वैवस्वत एवं अन्तक।' इनके पिता विवस्वत हैं[10] इसलिए इन्हें अनेक बार वैवस्वत (पैतृक नाम) नाम से सम्बोधित किया गया है।[11]

योगदर्शन के साधनपाद–30 में वर्णित अष्टाङ्गयोग का प्रथम अंग 'यम' कहा गया है।

कोशकारों ने यम का अर्थ–संयम करना, नियंत्रित करना, दमन करना, आत्मनियन्त्रण करना बतलाया है। लगता है इन्हीं विशिष्टताओं के कारण यमलोक का एक नाम 'संयमनी पुरी' है। विवस्वान् के कनिष्ठ पुत्र को गीता[12] में श्रीकृष्ण ने इन्हें अपना स्वरूप बतलाया है–

6 तैत्तिरीय संहिता : 2.6.12.6– इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः। आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व॥

7 ऐतरेय ब्राह्मण : तृतीय पञ्चिका, 37– "यामीमेव पूर्वां शंसेदिमं यम प्रस्तरमा हि सीदेति राज्ञो वै पूर्वपेयं तस्माद्यामीमेव पूर्वां शंसेत्।"

8 सन्दर्भ : प्रतिशाख्यों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द, पृष्ठ–92

9 अमरकोश : 1.1.58

10 ऋग्वेद : 10.14.5– अङ्गिरोभिरा गहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व। विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य ॥5॥

11 ऋग्वेद : 10.14.1– परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम्। वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ॥1॥

12 गीता : 10.29– अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्। पितॄणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥29॥

'यमः संयमतामहम्।'

यम का पौराणिक स्वरूप

ये परम ज्ञानी हैं। पुण्यात्मा जीव को ये स्वाभाविक रूप से सौम्यमूर्ति दीखते हैं, लेकिन पापियों के लिये अत्यन्त भयानक एवं कालदण्ड लिये हुए दिखाई देते हैं।[13]

पुराणों के अनुसार मृत्यु के भय के साथ अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण यम मृत्यु के देवता के रूप में जाने जाने लगे। यम के ऋत्विजों की संख्या सात है, जो इस प्रकार से है– उन्मुचु, प्रमुचु, स्वस्त्यात्रेय, दृढव्य, उर्ध्वबाहु, तृणसोमांगिरा और अगस्त्यमुनि– ये सभी दक्षिण दिशा में निवास करते हैं।[14]

भगवान् सूर्य की दस सन्तान

⇒ **संज्ञा नामक पत्नी से- 1. वैवस्वत मनु, 2. यम, 3. यमी (यमुना), अश्विनीकुमार (4. नासत्य, 5. दस्र) और 6. रेवन्त।**

⇒ **छाया नामक पत्नी से- 7. शनिदेव, 8. तपती, 9. भद्रा, एवं 10. सावर्णि मनु।**

पौराणिक यम मृत्यु के देवता हैं जिनका वाहन महिष है। इनके दो रूपों का वर्णन मिलता है– यमराज और धर्मराज। यमराज दुष्टात्माओं को कर्मानुसार दण्ड देते हैं और धर्मराज धर्मात्मा मनुष्यों को स्वर्गादि भेजकर पुरस्कृत करते हैं।

यम के दो सन्देशवाहक कुत्ते भी है, जो सरमा के पुत्र 'सारमेय' कहलाते हैं।[15] इनकी संख्या दो है। ये चार नेत्रों वाले, चौड़ी नासिका वाले, चितकबरे एवं भूरे अथवा श्याम रंग के हैं।[16] ये एक ऐसे रक्षक हैं, जो पथों की रक्षा किया करते हैं अथवा पथ पर बैठे रहते हैं।[17] यमदेव के पाश को वरुणदेव के पाश के ही समानान्तर बतलाया गया है।[18]

जगत् कल्याण को समर्पित सूर्य परिवार

13 स्कन्द पुराण, काशीखण्ड पूर्व० : 8.54-56– शृणु सौम्य सुसौम्योऽसौ दृश्यतेऽत्र भवादृशैः॥ धर्ममूर्तिः प्रकृत्यैव निःशंकैः पुण्यराशिभिः॥54॥ अयमेव हि पिंगाक्षः क्रोधरक्तांतलोचनः॥ दंष्ट्राकरालवदनो विद्युल्ललनभीषणः॥ 55॥ ऊर्ध्वकेशोऽतिकृष्णांगः प्रलयांबुदनिःस्वनः॥ कालदंडोद्यतकरो भुकुटी कुटिलाननः॥ 56॥

14 महाभारत, अनुशासन पर्व : 150.34-35, उन्मुचुः प्रमुचुश्चैव स्वस्त्यात्रेयश्च वीर्यवान्। दृढव्योऽथोर्ध्वबाहुश्च तृणसोमाङ्गिरास्तथा॥34॥ मित्रावरुणयोः पुत्रस्तथागस्त्यः प्रतापवान्। धर्मराजर्त्विजः सप्त दक्षिणां दिशमाश्रिताः ॥35॥ (गीताप्रेस का प्रकाशित पाठ, पंचम खण्ड)

15 ऋग्वेद : 10.14.10-12 अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा। अथा पितॄन्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति ॥10॥ यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ। ताभ्यामेनं परि देहि राजन्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि ॥11॥ उरूणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु। तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम् ॥12॥

16 अथर्ववेद : 8.1.9– श्यामश्च त्वा मा शबलश्च प्रेषितौ यमस्य यौ पथिरक्षी श्वानौ। अर्वाङेहि मा वि दीध्यो मात्र तिष्ठः पराङ्मनाः ॥9॥

17 अथर्व० : 18.2.12– यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिषदी नृचक्षसा। ताभ्यां राजन् परि धेह्येनं स्वस्त्यस्मा अनमीवं च धेहि ॥12॥

18 ऋग्वेद : 10.97.16– मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत। अथो यमस्य पड्बीशात्सर्वस्माद्देवकिल्बिषात् ॥16॥

19 ऋग्वेद : 1.115.1– चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥1॥

जो स्वयं जगत्चक्षु हों[19], जगत के पालनकर्ता हों, जो अपने तीनों रूपों (निर्गुण–निराकार, सगुण–निराकार एवं सगुण–साकार) में पूजनीय हों, ऐसे अखण्ड-मण्डलाकार भगवान् सूर्य के पारिवारिक पृष्ठभूमि में सूर्यपुत्र यमदेव भी प्रतिष्ठित हैं।

भगवान् सूर्य की दस सन्तानों का वर्णन मिलता है, जिनमें संज्ञा से– वैवस्वत मनु, यम, यमी (यमुना), अश्विनीकुमार और रेवन्त तथा छाया से– शनिदेव, तपती, भद्रा, सावर्णि मनु हुए। सूर्यपत्नी संज्ञा विश्वकर्मा (त्वष्टा) की पुत्री है। ये अपनी तीन सन्तान वैवस्वत मनु, यम और यमी को उत्पन्न करने के बाद भगवान् सूर्य के तेज को सहन नहीं कर सकने के कारण अपने ही रूप-आकृति एवं वर्ण वाली एक प्रतिमूर्ति का छाया का निर्माणकर 'उत्तरकुरु' में जाकर वडवा (अश्विनी) का रूप धारण कर अपनी शक्तिवृद्धि हेतु कठोर करने लगी। इधर सूर्य छाया को ही अपनी पत्नी संज्ञा समझ बैठे। इसी छाया से इन्हें चार पुत्र हुए। विश्वकर्मा यह जानते थे कि सूर्यतेज को सहन नहीं करने के कारण संज्ञा तप करने गयी है। अतः सूर्य की इच्छा पर इन्होंने सूर्यतेज को खराद कर कम कर दिया। कालान्तर में सूर्य को यह पता चलने पर कि यह संज्ञा नहीं है और तब संज्ञा की खोज करते हुए उत्तरकुरु जा पहुँचे और सूर्य संज्ञा से अश्वरूप में ही मिले। वडवा ने परपुरुष के स्पर्श के भय से सूर्य के तेज को अपने नाकों से बाहर फ़ेंक दिया, जिससे अश्विनीकुमारों को उत्पत्ति हुई, पुनः तेज के अंतिम अंश से रेवन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

भगवान् सूर्य के परिवार का परिचय इस प्रकार हैं –

1. वैवस्वत मनु–

विवस्वान् के पुत्र होने के कारण इन्हें वैवस्वत कहा गया। अभी इन्हीं का मन्वन्तर चल रहा है।

2. यम–

भगवान् सूर्य के दूसरे पुत्र, धर्मदृष्टि से सम्पन्न एवं न्यायकर्ता हुए। इनके लिये मित्र अथवा शत्रु एक समान हैं। इसलिए इनका कार्य प्रजा-नियन्त्रण है।

3. धूमोर्णा–

यमराज की पत्नी का नाम है।[20]

4. यमी (यमुना)–

भक्त कल्याणार्थ यमी यमुना बनकर एक पवित्र नदी के रूप में जानी गयी। यमुना को 'कृष्णवामांश-सम्भूता' कहलाने का सौभाग्य प्राप्त है।

5-6. अश्विनीकुमार–

ये एक नहीं बल्कि दो हैं। इनके नाम है– नासत्य और दस्र। ये अश्वरूपधारिणी संज्ञादेवी के नाक से प्रकट हुए थे। ये देवताओं के चिकित्सक कहलाते हैं।[21]

7. रेवन्त–

सूर्यरूप सदृश रेवन्तक को भगवान् सूर्य ने अश्वों का स्वामी बनाया। कहा जाता है जो अपने गन्तव्य मार्ग के लिये रेवन्त की पूजा कर प्रस्थान करता है, उसे मार्ग में क्लेश नहीं मिलता।[22] रेवन्त को गुह्यकों का अधिपति भी कहा गया है।

20 महाभारत अनुशासन पर्व : 165.11 शक्र: शचीपतिर्देवो यमो धूमोर्णया सह। वरुण: सह गौर्या च सह ऋद्धया धनेश्वर:।।13।। (गीता प्रेस खण्ड, 6)

21 महाभारत, अनुशासनपर्व : 150.17– नासत्यश्चापि दस्रश्च स्मृतौ द्वावश्विनावपि।।17।। (गीता प्रेस खण्ड, 6)

22 भविष्य पुराण, ब्रह्मपर्व : अध्याय– 79

23 पद्मपुराण,उत्तर खण्ड : 34.27-36

8. शनि–

सूर्यपुत्र शनिदेव को एक क्रूर ग्रह कहा गया है। लेकिन इनकी कृपा से मंगल भी होता है। कहा गया है इनकी पूजा कर तथा शनिस्तोत्र का पाठ करने वाले सभी पीड़ा से मुक्त रहते हैं।[23]

9. तपती–

सूर्यदेव की पुत्री।[24] तपती नदी रूप में प्रतिष्ठित है जो विन्ध्यगिरि से निकलकर पश्चिमी समुद्र में जाकर मिलती है। इस नदी में स्नान करना पुण्यदायक होता है। सौम्या नदी से तपती का एवं गंगा से यमुना का संगम होता है। महाभारत के अनुसार तपती को राजा संवरण ने पत्नी रूप में प्राप्त किया था, जिसके गर्भ से कुरु का जन्म हुआ था।[25]

10. भद्रा–

भद्रा को पंचाङ्ग का पाचवां अंग (करण) होने का गौरव प्राप्त है। विष्टि का ही अपर नाम भद्रा है। भद्रा की कोई उपेक्षा नहीं कर सकता, सभी इनका आदर करते हैं। इनका निवास तीनों लोकों में हैं।

11. सावर्णि मनु–

ये आठवें मनु होंगें। अभी वर्तमान में सप्तम वैवस्वत मनु का मन्वन्तर चल रहा है। कहा जाता है कि सावर्णि मनु मेरुपर्वत के पृष्ठप्रदेश में तपस्यारत हैं। महाभारत के अनुसार सावर्णि एक विख्यात ऋषि के रूप में प्रसिद्ध होंगे तथा इन्होंने छः हजार वर्षों तक तपस्या कर रुद्रदेव को प्रसन्न करके इनका साक्षात् दर्शन प्राप्त किया था तथा विश्वविख्यात ग्रन्थकार और अजर-अमर होने का वरदान प्राप्त किया था।[26] सावर्णि इन्द्र-सभा में उपस्थित रहकर इन्द्र की उपासना किया करते हैं।[27] श्रीमद्भागवत के अनुसार सावर्णि आठवें मनु और सूर्य के पुत्र हैं।[28] इनकी कथा दुर्गासप्तशती में वर्णित है– राजा सुरथ ने महादेवी भगवती की कृपा से अपने दूसरे जन्म में सूर्यसूत सावर्णि नाम मनु होने का वर प्राप्त किया था।

मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः।
सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति।।[29]

यमराज द्वारा अतिथि सत्कार्यता एवं इनका वरदरूप

यमदेव को हमारे सत्साहित्यों में कहीं उग्र तो कहीं सौम्यरूप में भी देखा गया है। कठोपनिषद् के एक प्रसंग के अनुसार जब स्वर्गसुख की कामना से वाजश्रवस् (गौतमवंशीय वाजश्रवात्मज महर्षि अरुण के पुत्र उद्दालक) ने विश्वजित्-यज्ञ (इस यज्ञ में सर्वस्व दान करना पड़ता है) में बूढ़ी एवं अशक्त गायों को दान में देता देख इनके पुत्र नन्हें नचिकेता के एक प्रश्न से क्रोधित होकर पिता वाजश्रवस् ने पुत्र नचिकेता को ही यम (मृत्यु) को दान में दे डाला। जब नचिकेता यमपुरी पहुँचे तब यमदेव अपनी पुरी में नहीं थे। अब नचिकेता यम के द्वार पर तीन दिन तक भूखे-प्यासे रहकर

24 महाभारत, आदिपर्व, 170. 6-7– य एष दिवि धिष्ण्येन नाकं व्याप्रोति तेजसा। एतस्य तपती नाम बभूव सदृशी सुता।।6।। विवस्वतो वै देवस्य सावित्रयवरजा विभो। विश्रुता त्रिषु लोकेषु तपती तपसा युता ।।। 7।।

25. महाभारत, आदिपर्व, 94.48– आजमीढो महायज्ञेर्बहुभिर्भूरिदक्षिणैः। ततः संवरणात् सौरी तपती सुषुवे कुरुम्।। 48।।

26 महाभारत, अनुशासन पर्व : 14.103 सावर्णिश्चापि विख्यात ऋषिरासीत् कृते युगे। इह तेन तपस्तप्तं षष्टिवर्षशतान्यथ।। 103।।

27 महाभारत, सभापर्व : 7.6-10 तस्यामुपासते नित्यं महात्मानं शतक्रतुम्।... पराशरः पर्वतश्च तथा सावर्णिगालवौ।।10।।

28 श्रीमद्भागवत 8.13.8-17– अष्टमेऽन्तर आयाते सावर्णिर्भविता मनुः। निर्मोकविरजस्काद्याः सावर्णितनया नृप 11.

29 दुर्गासप्तशती : 13.22-23.

प्रतीक्षित रहे। जब यम वापस अपने गृह आये, तब एक ब्राह्मणकुमार को देखकर यथोचित ब्राह्मण-सत्कार कर एवं तीन रात्रि के बदले तीन वरदान माँगने को कहा। कठोपनिषद् का कथन है– ब्राह्मण किसी गृहस्थ के घर आ जाये, तब इन्हें अर्घ्य-पाद्य-आसन आदि से इनका सत्कार करना चाहिये। ब्राह्मण अतिथि साक्षात् अग्नि ही मानो तेज से प्रज्ज्वलित होकर गृहस्थ के घर पधारते हैं।

आशाप्रतिक्षे संगतं सुनृतां च
इष्टापूर्ते पुत्रपशून् श्च सर्वान्।
एतद् वृङ्क्ते पुरुषस्याल्पमेधसो
यस्यानश्नन् वसति ब्राह्मणो गृहे।।[30]

'जिसके घर में ब्राह्मण अतिथि बिना भोजन किये निवास करता है उस मन्दबुद्धि मनुष्य की नाना प्रकार की आशा और प्रतीक्षा; उनकी पूर्ति से होने वाले सभी प्रकार के सुख, सुन्दर भाषण के फल एवं यज्ञ, दान आदि शुभ कर्मों के फल तथा समस्त पुत्र और पशु आदि नष्ट हो जाते हैं।' इन बातों से सम्मानीय अतिथि की उपेक्षा का फल एवं कर्त्तव्यकर्मों का संक्षिप्त रुपरेखा का विवरण मिलता है। इस उपनिषद् में यम-नचिकेता का संवाद बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार निर्भीक नचिकेता ने यमदेव के प्रत्यक्ष दर्शन कर इनसे तीन वर– अपने पिता का क्रोध शान्त होने एवं पहले की भाँति स्नेह रखने, स्वर्ग के साधनरूप अग्निविद्या तथा अमरत्वमुखी आत्मविद्या प्राप्त कर ब्रह्मज्ञान-सम्पन्न हुए।

वटसावित्री की कथा में यमराज

इसी कड़ी में एक महाभारतीय कथा है, जो सावित्री एवं सत्यवान् से सम्बन्धित है, जिसमें वैवस्वत के वरदरूप के दर्शन होते हैं– शाल्वदेश के राजा द्युमत्सेन का पुत्र सत्यवान् जो अल्पायु का था। एक दिन वन में समिधा की लकड़ियाँ लेने अपनी पत्नी सावित्री के साथ गया था। उसी समय अचानक अपनी अस्वस्थता के कारण अचानक सत्यवान् का प्राणान्त हो गया। जब यमदेव सत्यवान् के प्राण का हरण कर ले जाने लगते हैं तब सावित्री का उस समय यमराज से साक्षात्कार होता है, जो सत्यवान् के अङ्गुष्ठमात्र परिणाम वाले जीव को यमपाश से बाँधकर ले जा रहे थे। सावित्री इनके पीछे-पीछे ही चलने लगी और इन दोनों के बीच धर्म-नीति की लम्बी बातें होती हैं। जिससे यमराज प्रसन्न होकर सवित्री को सत्यवान् के प्राण के बदले चार वरदान देते हैं, लेकिन सत्यवती अपनी चतुराई से सत्यवान् के प्राण भी वापस माँग लेती है। इन चार वरों में–

⇒ **अपने अन्धे श्वसुर के लिये नेत्रज्योति,**
⇒ **श्वसुर के लिये छीने गये राज्य की पुनर्वापसी,**
⇒ **अपने पिता अश्वपति के लिये सौ तेजस्वी पुत्र तथा**
⇒ **मुझे और मेरे पति सत्यवान् के कुलरक्षा (कुलवृद्धि) के लिये सौ पराक्रमी पुत्र हों।**

यह वरदान पाते ही सवित्री कहने लगी कि अब तो मेरे पति जीवित होंगे ही क्योंकि आपने मुझे सौ पुत्रों का वरदान दिया है। इस प्रकार सत्यवान् के प्राण के साथ पाँचवां वर– सत्यवान् की आयु चार सौ वर्ष की हो, भी प्राप्त हो गया। इसी कथानक के आधार पर सनातन संस्कृति में ज्येष्ठ कृष्ण त्रयोदशी को प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्री अपने पति के दीर्घायु एवं त्रितापों से मुक्ति के लिये एक व्रत रखती हैं– जिसे 'वट-सावित्रीव्रत' कहा जाता है। इस प्रसंग का विस्तृत वर्णन महाभारत वनपर्व, अध्याय, 297 में द्रष्टव्य है।

30 कठोपनिषद् : 1.1.8

उपर्युक्त कथानक में मृत्यु के साथ यम का स्पष्ट सम्बन्ध दर्शाता है और मृत्यु का भय से अन्योन्याश्रय सम्बन्ध जगजाहिर है।

इस प्रकार, पुराकथाशास्त्रों में मृत्यु के भय के साथ अपेक्षाकृत अधिक सम्बन्ध रहने के कारण यमदेव मृत्यु के देवता बन गये। बाद की संहिताओं में 'अन्तक', 'मृत्यु'[31], और निर्ऋति[32] के साथ यमदेव का उल्लेख है। मृत्यु इनका दूत है[33] अथर्ववेद में मृत्यु को मनुष्यों का एवं यम को पितरों का अधिपति कहा गया है।[34] निद्रा भी यम के ही क्षेत्र में ही आती है। स्वस्त्यात्रेय नामक एक शक्तिशाली ब्रह्मर्षि का नाम महाभारत में आता है जिन्हें यम (धर्मराज) का ऋत्विज् कहा गया है। ये अन्य ब्रह्मर्षियों के साथ सदैव दक्षिण दिशा में निवास करते हैं।[35]

> **"इस यमसभा में कालचक्र, भगवान् हव्यवाहन, शिंशप एवं पलाश, काश और कुश आदि के अभिमानी देवता मूर्तिमान् होकर धर्मराज की उपासना किया करते हैं। यह सभा बाधारहित तथा इच्छानुसार गमन करने वाली है। यहाँ की सभा में उन्हींको प्रवेश मिलता है, जो सत्यवादी, व्रती, शान्त, संन्यासी, कर्म-शुद्ध एवं पुण्य-शुद्ध हुआ करते हैं।"**

यम-सभा

अनेक देवसभाओं में जैसे– ब्रह्म-सभा, इन्द्र-सभा, वरुण-सभा, कुबेर-सभा के साथ ही यम-सभा का भी वर्णन मिलता है। सूर्यपुत्र यम की सभा का निर्माण विश्वकर्मा ने दीर्घकाल तक तपस्या करने के उपरान्त किया है, जो सौ योजन लम्बा तथा सौ योजन चौड़ा है। यह विशाल सभा समशीतोष्ण है। यहाँ शोक, व्यथा, बुढ़ापा, भूख, दीनता, थकावट आदि जैसी यहाँ कोई भी अप्रिय वस्तु या प्रतिकूल वस्तु का आगमन नहीं हो सकता। यहाँ दिव्य और मानुष– सभी प्रकार के भोग तथा ठण्ढे और गर्म स्वादिष्ट जल उपलब्ध रहते हैं। इस सभा में पुण्यशाली राजर्षि, महर्षि आदि यमदेव की उपासना किया करते हैं। विभिन्न राजाओं में ययाति, पूरु, नहुष, मान्धाता, नृग, कार्तवीर्य, अरिष्टनेमि, कृति,

31 यजुर्वेद वाजसनेयी संहिता : 39.13– यमाय स्वाहान्तकाय स्वाहा मृत्यवे स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहा ब्रह्महत्यायै स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥

32 अथर्ववेद : 6.29.3,– पराङेव परा वद पराचीमनु संवतम्। यथा यमस्य त्वा गृहेऽरसं प्रतिचाकशान् आभूकं प्रतिचाकशान् ॥3॥; मैत्रायणी संहिता 2.5.7– पशुं बध्नामि वरुणाय राज्ञा इन्द्राय भागं ऋषभं केवलो हि।गात्राणि देवा अभिसंविशन्तु यमो गृह्णातु निर्ऋतिः सपत्नान्॥

33 अथर्ववेद : 5.30.12– नमो यमाय नमो अस्तु मृत्यवे नमः पितृभ्य उत ये नयन्ति। उत्पारणस्य यो वेद तमग्निं पुरो दधेऽस्मा अरिष्टतातये ॥12॥

34 अथर्ववेद : 5.24.13-14– मृत्युः प्रजानामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्याम् चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ॥13॥ यमः पितृणामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्याम् चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ॥14॥

35 महाभारत, अनुशासन पर्व : 150.34-35 (उपरिवत् टिप्पणी सं. 14); शान्तिपर्व–208.28– उन्मुचो विमुचश्चैव स्वस्त्यात्रेयश्च वीर्यवान्॥28॥

भैयादूज के दिन भाई यदि बहन के घर का अन्न खाता है, तो यमराज प्रसन्न होते हैं। भाई की उम्र बढ़ती है तथा बहन का सुहाग बढ़ता है।

बहन यदि उम्र में भाई से बड़ी हो तो यह मंत्र पढ़े-

भ्रातस्तवाग्रजाताहं भुंक्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीयते यमराजस्य यमुनायाश्च विशेषतः।।

बहन यदि भाई से छोटी हो तो यह मंत्र पढ़े-

भ्रातस्तवानुजाताहं भुंक्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीयते यमराजस्य यमुनायाश्च विशेषतः।।

नेमि, प्रदर्तन, शिवि आदि अनेकों मरणोपरान्त यहाँ उपस्थित होकर यमदेव (धर्मराज) की उपासना किया करते हैं। इस सभा में कालचक्र, भगवान् हव्यवाहन, शिंशप एवं पलाश, काश और कुश आदि के अभिमानी देवता मूर्तिमान् होकर धर्मराज की उपासना किया करते हैं। यह सभा बाधारहित तथा इच्छानुसार गमन करने वाली है। यहाँ की सभा में उन्हीं को प्रवेश मिलता है, जो सत्यवादी, व्रती, शान्त, संन्यासी, कर्म-शुद्ध एवं पुण्य-शुद्ध हुआ करते हैं।[36]

मृत्यु-रोग आदि के अधिष्ठाता यमराज से त्राण पाने तथा अपमृत्यु से रक्षण हेतु सर्वतोभद्रमण्डल में इन्द्रादि देवताओं के साथ यम का भी प्रतिष्ठापूर्वक आवाहन-पूजन किया जाता है। नवग्रहों में से एक शनिदेव के अधिदेवता (या अधिरक्षक देवता) के रूप में यमदेवता की गणना होती है।

यमदेव हमारे समस्त शुभ-अशुभ कर्मों की पूरी जानकारी रखते हैं, इसमें इनके ज्ञान में तनिक भी त्रुटि नहीं आ पाती।[37] अनश्वर यमलोक में निरन्तर अनश्वर ज्योति जलती रहती है, यहाँ किसी की मृत्यु नहीं होती। गृह, वापी, प्रासाद आदि के निर्माण में वास्तुमण्डल की रचना का विधान है। चौसठ या इक्यासी-कोष्ठात्मक वास्तुचक्र में भी यमदेव दक्षिण दिशा में प्रतिष्ठित हैं। दस दिक्पालों (इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा तथा अनन्त) में यम दक्षिण दिशा के अधिपति माने जाते हैं।

यम का दीया

भारतीय संस्कृति में यम एक अभिन्न देव हैं। इनके लिये कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को रात्रिकाल में अपने गृह के बाहर इनको उद्देश्य कर दक्षिणाभिमुख होकर दीपदान करना चाहिये। इस कार्य के लिये स्वयं यमदेव का कहना है– जो धनतेरस के दिन मेरे उद्देश्य से दीपदान करेगा उसकी असामयिक मृत्यु नहीं होगी। दीपदान के मन्त्र इस प्रकार हैं–

मृत्युना पाशहस्तेन कालेन भार्यया सह।
त्रयोदश्यां दीपदानात्सूर्यजः प्रीयतामिति।।

नरक चतुर्दशी

इसी के अगले दिन यानि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को 'नरक-चतुर्दशी' मनाया जाता है। इसकी कथा वामनावतार से जुड़ी है। इसदिन स्नानादि के पवित्र होकर दक्षिणाभिमुख होकर तिलयुक्त जलाञ्जलि–

'ॐ यमाय नमः, ॐ धर्मराजाय नमः....'

कहते हुए देने का विधान है, इसे 'यम-तर्पण' कहा जाता है। इसके करने से वर्षभर के पाप नष्ट हो जाते हैं।

यम-द्वितीया— भैयादूज

36 महाभारत, सभापर्व : 8.1-41

37 ऋग्वेद : 10.14.2– यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ। यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः ॥2॥

कार्तिक शुक्ल द्वितीया को 'यम-द्वितीया' (भैया-दूज) कहा जाता है। इस दिन यमदेव की बहन यमुना यमदेव से मिलने आयी थी, जिससे यमदेव प्रसन्न होकर यमुना से कहा– बहन! मैं तुमसे अतिप्रसन्न हूँ, मुझसे मनोनुकूल वर माँगों। इसपर यमुना ने कहा– आज के दिन जो मुझमें (यमुना नदी में) स्नान करेगा,उसे यमलोक न जाना पड़े। इसीदिन यमुना ने यम को भोजन कराया था। इसी के प्रतिरूप में बहनें अपने भाई को गन्धादि से पूजन कर भोजन करवाती हैं, जिसके बदले में बहन को कुछ भेंट आदि भी देते हैं। भाई-बहन के प्रेम का पर्व वस्तुतः यम और यमी के बीच भाई-बहन के बीच सौहार्द्र का प्रतीक है।

भगवान् के द्वारा निर्मित भागवतधर्म जो सर्वकल्याण का साधन है, जिसके जानकार मात्र बारह व्यक्तियों में यमदेव भी हैं। इनके नाम हैं- ब्रह्माजी, देवर्षि नारद, भगवान् शंकर, सनत्कुमार, कपिल, स्वायम्भुव मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्मपितामह, बलि, शुकदेवजी एवं यमदेव (धर्मराज)।[38] भगवान् के नामोच्चारण की महिमा से ही अजामिल-जैसा पापी भी मृत्युपाश से बच जाता है- यह यमदेव का कहना है।

नामोच्चारणमाहात्म्यं हरेः पश्यत पुत्रकाः।
अजामिलोऽपि येनैव मृत्युपाशादमुच्यत।।

***

38 श्रीमद्भागवत : 6.3.20-21– यम उवाच।... स्वयम्भूर्नारदः शम्भुः कुमारः कपिलो मनुः। प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासकिर्वयम् 20। द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः। गुह्यं विशुद्धं दुर्बोधं यं ज्ञात्वामृतमश्नुते 21।

लेखकों से निवेदन

'धर्मायण' का अगला 'धर्मायण' का अगला अंक हेमन्त ऋतु अंक के रूप में प्रस्तावित है। हेमन्त ऋतु का महत्त्व प्राचीन काल में तो था ही, आज के परिप्रेक्ष्य में भी धान कटने का मास होने के कारण लोक-शास्त्र तथा संस्कृति में महत्त्वपूर्ण है। 'अग्रहायण' शब्द वर्ष के आरम्भ का भी संकेत करता है। इसी मास में नवान्न-भक्षण की वैदिक परम्परा है। नवान्न विधि की लोक-परम्परा आज भी बची हुई है। किसान धान की खेत के पास जाकर उस अन्न की पूजा करते हैं। अगहन मास के महत्त्व को देखकर ही शायद श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है- मासानां मार्गशीर्षोऽहम्। इस मास से सम्बन्धित वैदिक, पौराणिक तथा लौकिक महत्त्व से सम्बद्ध आलेख आमन्त्रित हैं।

यम प्रतिमा के लक्षण और सूक्ष्म विवेचन

डॉ. श्रीकृष्ण जुगनू
लगभग 175 ग्रन्थों के अनुवादक एवं सम्पादक,
विश्वाधारम्, 40 राजश्रीकॉलोनी, विनायकनगर,
उदयपुर 313001 (राजस्थान), राजस्थान,
मेल : skjugnu@gmail.com

वर्तमान में यम के नाम पर हमें अनेक ऐसे चित्र वेबसाइट पर मिलते हैं, जिनके मुकुट में दो सींगें लगाकर उन्हें भयंकर बना दिया गया है। यमराज का चेहरा राक्षस-सा कर दिया गया है। प्रश्न उठता है कि क्या यमराज की ऐसी मूर्ति बनाने का कहीं उल्लेख हुआ है? यदि नहीं तो हमें समझने की आवश्यकता है कि प्राचीन काल में यम की मूर्तियाँ कैसी बनती थीं? मूर्तियों के स्वरूप पर प्राचीन शिल्प-ग्रन्थों में बहुत लिखा गया है। मूर्ति कितनी भुजाओं वाली होनी चाहिए, किस हाथ में क्या धारण कराना चाहिए, सब का अपना शास्त्र है- परम्परा है। इसे हम आधुनिक भाषा में Iconography कहते हैं। आइए यहाँ हम यमराज की Iconography को जानें और जो लोग हमारे देवों की छवि को wallpaper और कार्टून के माध्यम से बिगाड़ने का दुष्प्रयास कर रहे हैं, उनका खण्डन शास्त्रों के आधार पर करें।

दिक्पाल के रूप में यम

यम देवता हैं, जो दिशाओं का परिपालन करने वाले माने गए हैं। इनको 'लोकपाल' भी कहा गया है। प्राचीन सन्दर्भों में चार दिशाओं के दिक्पालों में पूर्व के इन्द्र, दक्षिण के यम, पश्चिम के वरुण और उत्तर के सोम को प्रथम स्थान दिया गया है। उनके सूक्त एवं ऋचाओं की उपलब्धि वेदों में प्राप्त होती है। तदुपरान्त विदिशाओं अथवा विकोण के दिक्पालों में अग्नि (आग्नेय कोण), निर्ऋति (नैर्ऋत्य कोण), वायु (वायव्य कोण) और ईश (ईशानकोण) को स्थान देकर आठ दिशाधिपति माने गए। समयान्तर में अधः या पाताल के स्वामी अनन्त एवं ऊर्ध्व या आकाश के स्वामी ब्रह्मा को स्वीकारा गया। इस प्रकार दस दिक्पालों की गणना हुई। गूढ़ार्थकोशों में दिक्पाल से आशय ही 10 की संख्या मानी जाती है।

मूर्तिकला या शिल्पग्रन्थों में दिक्पाल या लोकपाल के रूप में पूर्वादि दिशाओं के लिए क्रमशः 1. इन्द्र, 2. अग्नि, 3. यम, 4. निर्ऋति, 5. वरुण, 6. वायु, 7. धनद और 8. ईशान की प्रतिमाओं के निर्माण का निर्देश मिलता है। इनको मन्दिरों की बाह्यभित्ति भाग के मण्डोवर में स्थान दिया जाता है और उसके जंघा प्रदेश पर उपांगों में अनेक देवों, देवियों, देवांगनाओं के साथ मूर्तिमान् किया जाता है। ये दिशाओं के अनुसार स्थापित किए जाते हैं।

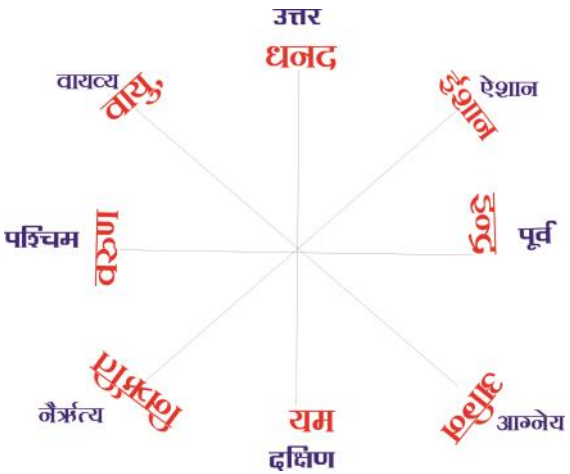

दिक्पाल चक्र

हिन्दू ही नहीं, जैनधर्म के पूजा-विषयक ग्रन्थों यथा 'आचार दिनकर', 'प्रतिष्ठसार', 'निर्वाण कलिका' आदि में दस ही दिक्पालों की पूजा का वर्णन मिलता है। दिक्पालों की मूर्तियों के सपत्नीक स्वरूप में बनाने का निर्देश विष्णुधर्मोत्तर एवं अन्य पुराणों में मिलते हैं, लेकिन ऐसे सपत्नीक दिक्पालों के स्वरूप अति अल्प ही मिलते हैं। देलवाड़ा के चौमुखा मन्दिर तथा डीसा के सिद्धाम्बिका मन्दिर में सपत्नीक दिक्पालों का अंकन मिलता है। स्त्री एवं पुरुष दोनों दिक्पालों के वर्ण, आयुध, वाहन और भुजाएँ एक समान करने का निर्देश मिलता है। इनके स्वतन्त्र मन्दिर कम ही मिलते हैं।[1]

मुख्यरूप से पारस्कर गृह्यसूत्र, अग्नि-पुराण, मत्स्य-पुराण, मानसोल्लास, देवतामूर्तिप्रकरण, रूप-मण्डन, वास्तुमंजरी, श्रीतत्त्वनिधि, पूर्वकारणागम आदि में यमादि की प्रतिमाओं को लक्षण सम्मत बनाने के व्यावहारिक सूत्र उपलब्ध होते हैं। लोकपालों के वर्णों में इन्द्र को पीत वर्ण, यम श्याम, वरुण स्फटिक के समान, कुबेर सुवर्णाभ, अग्नि सुवर्णाभ, निर्ऋति श्याम, वायु को धूम्रवर्ण और ईशान को रक्तवर्ण वाला बताया गया है–

इन्द्र: पीतो यम: श्यामो वरुण: स्फटिकप्रभ:।
कुबेरस्तु सुवर्णाभो ह्यग्निश्चापि सुवर्णभ:॥
तथैव निर्ऋति: श्यामो वायुर्धूम्र: प्रशस्यते।
ईशानस्तु भवेद् रक्त एवं ध्यायेक्रमादिमानिति॥[2]

वराहमिहिर ने यम की प्रतिमा के लिए कहा है कि यमराज की प्रतिमा के हाथ में दण्ड होगा और वह भैंसे पर आरूढ़ होगी–

दण्डी यमो महिषगो।[3]

मत्स्यपुराण में द्विभुज यमराज की मूर्ति के लिए कहा गया है कि वह दण्ड और पाश को धारण किए होंगे, महामहिष पर आरूढ़, काले अंजन की आभा वाले होंगे। यम को सिंहासनगत भी बनाया जा सकता है। आँखें आग की लपटों के समान अंगारे बरसाती हुई दिखानी चाहिए –

तथा यमं प्रवक्ष्यामि दण्डपाशधरं विभुम्॥
महामहिषमारूढं कृष्णाञ्जनचयोपमम्।
सिंहासनगतञ्चापि दीप्ताग्निसमलोचनम्॥[4]

इसी प्रकार, अग्निपुराण में बृहत्संहिता के अनुसार ही कहा गया है–

यमो दण्डी च महिषे।[5]

मानसोल्लास में द्विभुज प्रतिमा का वर्णन है–

पितृराजं प्रवक्ष्यामि नीलाञ्जनसमच्छविम्॥
दण्डपाशधरं दोर्भ्यां प्रदीप्ताग्निविलोचनम्।

1. भारतीय शिल्प संहिता : प्रभाशंकर ओघड़भाई सोमपुरा, सोमैया पब्लिकेशंस, मुम्बई, 1975, पृष्ठ 143.
2 दानमयूख : रत्नगोपाल भट्ट संशोधित, चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी, 2007 ई., पृष्ठ 27.
3 बृहत्संहिता : 58, 57.
4 मत्स्य पुराण : 260, 12-13.
5 अग्नि पुराण : 51.14.

महिषवाहन यम, चित्तौड़, 8वीं शती

महामहिषमारूढं सिंहासनमथापि वा॥
मृत्युना चित्रगुप्तेन पार्श्वयोरुपशोभितम्।
करालै: किङ्करैश्चैव सुरासुरगणैस्तथा॥
धर्मिभि: पापिभिश्चैव सेव्यमानं निरन्तरम्।[6]

ग्रन्थकार ने पितृराज (यमराज) की मूर्ति के लक्षण के लिए कहा है कि यमराज को काले-नीले अंजन के समान छवि वाला बनाएँ। उसके हाथों में क्रमश: दण्ड और पाश होंगे। आँखें क्रोध से लाल-लाल अंगारे जैसी चमकती हुई दीप्त हों। यमराज को बड़े भैसें पर आरूढ़ दिखाएँ या फिर सिंहासन पर विराजित करें। आजू-बाजू में पार्षद रूप में मृत्यु और चित्रगुप्त शोभायमान होंगे। इनके नौकर-चाकर (किंकर), देवगण, असुरगण बड़े विकराल रूप में होंगे। धार्मिकजन और पापीजन उनकी निरन्तर सेवा में लगे हुए दिखाए जाने चाहिए।

हेमाद्रि ने यम की मूर्ति के लक्षण विष्णुधर्मोत्तर पुराण के उद्धृत किए हैं। इस पुराण में लोकपालों की कल्पना चतुर्भुजरूप में है और सूक्ष्मता से विवरण दिया गया है–

सजलाम्बुदसच्छाय: तप्तचामीकराम्बर:।
महिषस्थश्च कर्तव्य: सर्वाभरणवान् यम:॥
नीलोत्पलाभां धूम्रोर्णां वामोत्सङ्गे च कारयेत्।
धूम्रोर्णा द्विभुजा कार्य्या यम: कार्य्यश्चतुर्भुज:॥
दण्डखड्गावुभौ कार्य्यौ यमदक्षिणहस्तयो:।
ज्वाला त्रिशूला कर्त्तव्या त्वक्षमाला च वामके॥
दण्डोपरि मुखं कार्य्यं ज्वालामालाविभूषणम्।
धूम्रोर्णा दक्षिणे हस्ते यमपृष्ठगतो भवेत्॥
वामे तस्या: करे कार्य्यं मातुलुङ्गं सुदर्शन:।
पार्श्वे तु दक्षिणे तस्य चित्रगुप्तं तु कारयेत्॥
उदीच्यावेषं स्वाकारं द्विभुजं सौम्यदर्शनम्।
दक्षिणे लेखनी तस्य वामे पत्रं तु कारयेत्॥
वामे पाशधर: कार्य्य: कालो विकटदर्शन:।[7]

उक्त श्लोकानुसार यमराज की मूर्ति जलभरे मेघ के समान वर्ण वाली बनानी चाहिए। तपे हुए सोने जैसे उनके वस्त्र होंगे। वे महिष पर सवार तथा समस्त आभूषणों से अलंकृत होंगे। नीले उत्पल की आभा वाली धूम्रोर्णा (यम की पत्नी धूम्रोर्णा) को उनके बायें भाग में बनाया जाना चाहिए। धूम्रोर्णा को दो भुजा और यमराज को चार भुजा वाला बनाना चाहिए। यम के दक्षिणी हाथों में प्रदक्षिण क्रम से दण्ड और खड्ग दोनों आयुध होंगे। बायें हाथों में ज्वाला त्रिशूल एवं अक्षमाला का नियोजन करना चाहिए। दण्ड के ऊपर

6. मानसोल्लास : सम्पादक-अनुवादक : श्रीकृष्ण 'जुगनू', चौखम्बा संस्कृत सीरिज ऑफिस, वाराणसी, 2020 ई., 1, 3, 781-784
7. चतुवर्गचिन्तामणि : व्रतखण्ड, अध्याय प्रथम, पृष्ठ 144-145; विष्णुधर्मोत्तर 3, 51, 1-7

> **"विष्णु की सांकर्षिणी मूर्ति रुद्र संहारकारक है। वही कल्पान्त में जगत् का संहार करती है। तब संसार संहृत होकर प्रकृति में व्याप्त हो जाता है। उससे प्रकृति में होने के कारण संसार का क्षय करता है। ईश्वर यम के रूप में प्राणियों का बार-बार संहार करके भी प्राणियों की प्रकृति में कभी योग धारण नहीं करता है। सुख-दु:ख विकार में लगता ही है, उससे परिवर्तनशील संसार का संहार होता है।"**

मुख पर अग्निज्वाला की लपटों का अलंकरण करें। यम का बायाँ हाथ धूम्रोर्णा की पीठ पर तथा दूसरे में ढाल हो तथा धूम्रोर्णा का दाहिना हाथ यम की पीठ पर होगा। उसके बायें हाथ में सुन्दर मातुलुंग (जम्बीरी नींबू) तथा दाहिने बाजू में चित्रगुप्त को बनाना चाहिए। उसका उदिच्यावेष, आकार के अनुसार दोभुज होंगे तथा सौम्यरूप में दिखाया जाएगा। चित्रगुप्त के दाहिने हाथ में कलम एवं बायें में पत्र धारण करवाएँ। बायीं ओर पाश को धारण करने वाले काल को भयंकर रूप में दिखाएँ।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण चूँकि पाञ्चरात्र सम्प्रदाय की मान्यताओं को धारण करने वाला विश्वकोशीय ग्रन्थ है, ऐसे में उसमें यमराज की प्रतिमा को तदनुसार ही विश्लेषित एवं विवेचित भी किया गया है। पुराणकार ने कहा है कि तामस-तनु आश्रित संकर्षण को यम के रूप में स्वीकारना चाहिए। मर्यादा के परिपालन और लोकसंहार के कारण नीलोत्पल के दल के समान श्याम तामस सत्व कहा गया है, उसके वस्त्र वासुदेव के समान है। परमात्मा ब्रह्म का चतुर्भुजत्व विश्रुत है, धारण किए सभी वस्त्र-आभरण ब्रह्मा से निर्दिष्ट है। जो मनुष्य मोह में मरते हैं, उनको महिष कहते हैं। यम के हाथ में अमोघ दण्ड मृत्युरूप है। खड्ग एवं ढाल धारण करना अनिरुद्ध के लिए निर्दिष्ट है। धूम्रोर्णा कालरात्रि हैं, उसको बीजपूरक धारक शम्भु कहा है। चित्रगुप्त सर्वदेवगत आत्मा है तथा उसके हाथ में धर्म रूप पत्र एवं कलम अधर्म रूप है। यम के निकटवर्ती काल ही काल का रूप है तथा उसके हाथ में धारण किया पाश दुर्गम एवं घोर यममार्ग जानना चाहिए–

यमं सङ्कर्षणं विद्धि तामसीं तनुमाश्रितम्॥
मर्यादापालनार्थाय लोकसंहारकारणम्।
नीलोत्पलदलच्छाय: तामसत्वात् प्रकीर्तित:॥
वसनं तस्य विख्यातं वासुदेवेन शत्रुहन्।
चतुर्भुजत्वं विख्यातं ब्रह्मणा परमात्मन:॥
ब्रह्मणा तस्य निर्दिष्टं सर्वाभरणधारणम्।
यो मोहो मरणं नृणां विज्ञेयो महिषस्तु स:॥
अमोघं तु करे दण्डं मृत्युं धारयते यम:।
अनिरुद्धेन तस्योक्तं धारणं खड्गचर्मणो:॥
कालरात्री तु विज्ञेया धूम्रोर्णा यदुनन्दन।
तस्यास्तु शूलिना प्रोक्तं बीजपूरकधारणम्॥
चित्रगुप्तो विनिर्दिष्टस्तथात्मा सर्वदेहग:।
पत्रं धर्ममधर्मं च करस्था तस्य लेखनी॥
काल एव स्वरूपेण कालो यमसमीपग:।
तस्य पाश: करे घोरो यममार्ग: सुदुष्कर:॥[8]

8. विष्णुधर्मोत्तर पुराण : 3.51.7-14.

यहाँ पुराणकार ने वज्र द्वारा मार्कण्डेय से यह प्रश्न करवाया है कि विष्णु की संहारकारिणी मूर्ति को संकर्षण माना गया है, उस देव को चन्द्रमा के समान शुक्ल देह वाला महान् बताया है, ऐसे में कल्प के अन्तर्गत संहारकर्ता यमराज कृष्णमूर्ति क्यों बताए गए हैं?

इस पर मार्कण्डेय ने कहा है कि विष्णु की सांकर्षिणी मूर्ति रुद्र संहारकारक है। वही कल्पान्त में जगत् का संहार करती है। तब संसार संहृत होकर प्रकृति में व्याप्त हो जाता है। उससे प्रकृति में होने के कारण संसार का क्षय करता है। ईश्वर यम के रूप में प्राणियों का बार-बार संहार करके भी प्राणियों की प्रकृति में कभी योग धारण नहीं करता है। सुख-दु:ख विकार में लगता ही है, उससे परिवर्तनशील संसार का संहार होता है–

मूर्ति: साङ्कर्षिणी विष्णो रुद्र: संहारकारक:।
कल्पक्षये तु संहारं करोति जगतां हि सा॥
प्रकृतौ याति धर्मज्ञ संहृतं तु यदा जगत्।
तेन प्रकृतिवर्णस्थ करोति जगतां क्षयम्॥
कृत्वापि प्राणिसंहारं यमरूपी पुन: पुन:।
प्राणिनां प्रकृतौ योगं न विधत्ते कदाचन॥
विकारे योजयत्येव सुखदु:खात्मके तदा।
विकाररूपवर्णं तु तेन संहरते जगत्॥[9]

इस प्रकार यमराज की मूर्ति के संगठन और प्रतीकात्मका को पहली बार विष्णुपुराणकार ने रेखांकित किया है। यह परम्परा बाद में लुप्त-सी लगती है।

दक्षिण भारतीय शिल्प ग्रन्थों और अंशुमद्, वैखानसादि आगमों में यम की प्रतिमा के लक्षण सर्वांगतया मिलते हैं। 'मयमतम्' में जो लक्षण आए हैं, वे आगमों का प्रतिनिधित्व करते हैं। यम की प्रतिमा में अनुचरों के रूप में चित्रगुप्त एवं कलि का उल्लेख है।

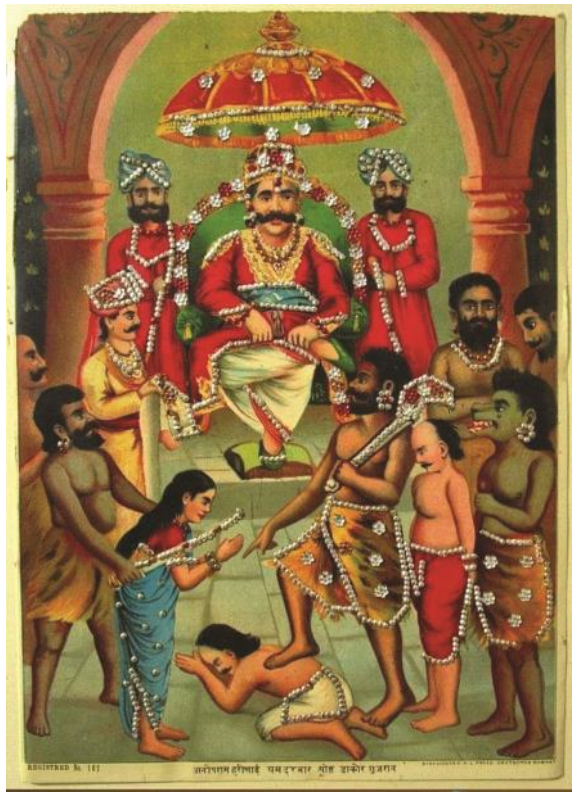

यम दरबार, राजा रविवर्मा द्वारा बनाया गया

यथा–

दण्ड पाणिं पाशहस्तो दीप्ताग्रिसमलोचन:।
महामहिषमारूढो नीलाञ्जनवपुप्रभ:॥
पार्श्वयोरात्मसदृशै: पुरुषैरुपजीविभि:।
पीनवक्ष:स्थलैर्दिव्यै: संहारै(र्बलवत्तरै:)॥
द्वारे समुत्थितै: क्रुद्धै: सर्वलोकभयङ्करै:।
चित्रगुप्त: कलिश्चेति दक्षिणोत्तरपार्श्वकौ॥
कृष्णश्यामनिभौ रक्तवक्त्रौ तौ समाहितौ।
पीठपार्श्वस्थितौ मृत्युसहितावुग्रतेजसौ॥
नीललोहितसङ्काशे द्विपार्श्वे चामरस्त्रियौ।

9. विष्णुधर्मोत्तर पुराण : उपर्युक्त, 3. 51.17-20.

वामदक्षिणपार्श्वस्थे धर्माधर्मासमाह्वये॥
आसीनश्च मया प्रोक्तो महिषध्वजवाहन:।[10]

उक्त श्लोकों के अनुसार यम के एक हाथ में दण्ड व दूसरे में पाश हो तथा आँखें प्रदीप अग्नि की भाँति प्रतीत होनी चाहिए। उन्हें महामहिष पर आरूढ़ करें तथा गहरे नीले रंग से तेजस्वी बनाएँ।[11] यम अपने पार्श्व में अपने ही समानीकृत अनुचरों से घिरे हों। उनकी मांसपेशियाँ और वक्ष उभरे हों तथा वे दिव्य, संहारक मृत्युदेवता तुल्य, उत्तरोत्तर बली लगें। उन्हें द्वार के निकट लगाएँ और क्रोधातुर बनाएँ। ऐसा लगे कि सभी लोकों को भयंकर लग रहे हों। विनयवत् चित्रगुप्त और कलि को पीछे क्रमश: दक्षिण व उत्तर-पार्श्व की ओर बनाएँ। उक्त दोनों पार्षदों को कृष्ण व अन्य गहरे वर्ण का बनाएँ तथा रक्तवस्त्र धारण करवाएँ। यमासन के बाद मृत्यु-सहिता[12] को बनाएँ, जो तेजोमय व उग्रतर लगें। इस प्रतिमा में उभयपार्श्व में एक-एक स्त्री को बनाएँ जो चामर उठाए हों तथा नील व लोहित वर्णा हों। इस प्रतिमा में दायें धर्म और बायें अधर्म को बनाना चाहिए। यम की प्रतिमा को आसनस्थ बनाएँ तथा उनके वाहन व ध्वज महिष का अंकन भी करें।

इसी प्रकार नीलकण्ठ भट्ट कृत 'भगवन्तभास्कर'

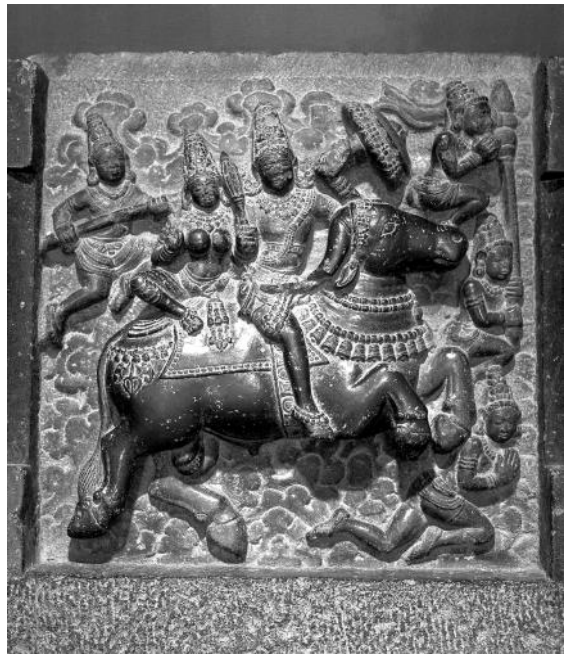

महिषवाहन यम, पत्नी धूम्रोर्णा के साथ

के 'दानमयूख' में लोकपालों के रूपों में यम का स्वरूप इस प्रकार बताया गया है–

ईषत्पीतो यम: कार्यो दण्डहस्तो विजानता।

अर्थात् कुछ-कुछ पीले वर्ण में यमराज को हाथ में दण्ड लिए दिखाना चाहिए। यह मत विश्वकर्मा के मत से

10 मयमतम् : सम्पादक : डॉ. श्रीकृष्ण जुगनू, चौखम्बा संस्कृत सीरिज ऑफिस, वाराणसी, 2007 ई., 36, 144-149

11 दीप्तागम : पाण्डिचेरी, 2002 ई., 16, 2. 52-53. यह वर्णन प्रकारान्तर से दीप्तागम के परिशिष्ट में मिलता है। तुलनीय है— महामहिषमारुढं नीलाञ्जनसमप्रभम्॥ दण्डपाशधरं देवं दीप्ताग्रिसमलोचनम्। कुर्याद् वैवस्वतं रूपं क्रुद्धं लोकभयङ्करम्॥

12 मृत्यु के साथ सहिता का वर्णन शिल्परत्नम् और काश्यपशिल्पम् में ही मिलता है, अन्यत्र देखने में नहीं आता। शिल्परत्नम् में उक्त श्लोक ही खण्डित रूप में हैं— पीठपार्श्वगतौ मृत्युसहितौवु(ग्रतेजसौ)॥ (उत्तर. 25, 26) बहुत सम्भव है कि यह संहिता हों; यमसंहिता अथवा यमस्मृति प्रसिद्ध है। चूँकि यम को नीतिज्ञ, निर्णायक कहा जाता है अत: संहिता का कोई स्वरूप उसकी प्रारम्भिक मूर्तियों में रहा है। यहाँ दोनों और मृत्यु का होना भी सम्भव है। काश्यपशिल्प अपरनाम अंशुमद्भेदागम में आया है— "द्विभुजं कृष्णवर्णं तु खड्गखेटकधारिणम्। करालदंष्टवदनं रक्तमाल्यानुलेपनम्॥ रक्तवस्त्रधरं चोग्रं किरीटमुकुटाञ्चितम्। दीप्ताग्रिसदृशाक्षं च महामहिषवाहनम्॥ वैवस्वतस्य पार्श्वस्थौ समीपस्थौ ग्रहोग्रकौ। चित्रगुप्त: किन्नरश्च द्वारपार्श्वे तु संस्थितौ॥ कृष्णश्यामनिभौ तौ च रक्तवस्त्रधरावुभौ। पीठपार्श्वे स्थितौ 'मृत्युसहितौ' व्यग्रतेजसौ॥ नीललोहितसंकाशौ द्वौ चामरधृतस्त्रियौ। पुरत: संस्थितौ विप्र शर्मधर्मसमाह्वयौ॥ यम: सिंहासनासीनो महिषोरोहितस्तथा।" (काश्यपशिल्पम् 48, 38-43)

सती सावित्री को वरदान देते हुए यमराज

बताया गया है।[13] सूत्रधार मण्डनकृत 'रूपमण्डन' में 'अपराजितपृच्छा'[14] के अनुसार यम प्रतिमा के लक्षण आए हैं जिसके अनुसार हाथों में लेखनी, पुस्तक, मुर्गा एवं दण्ड धारण किए हुए विशाल महिष पर आरूढ़ यमराज को काले वर्ण का बनाना चाहिए–

लेखिनीपुस्तकं धत्ते कुक्कुटं दण्डमेव च।
महामहिषमारूढा यम: कृष्णाङ्ग ईरित:॥[15]

यम के नाम प्रचलित स्मृतियाँ :

स्मृतियों में 'यमस्मृति' का सम्मानित स्थान है। अठारह स्मृतिकार हुए हैं–

1. मनु,	2. बृहस्पति,
3. दक्ष,	4. गौतम,
5. यम,	6. अंगिरा,
7. योगीश्वर,	8. प्रचेता,
9. शातातप,	10. पराशर,
11. संवर्त,	12. उशनस्,
13. शंख	14. लिखित,
15. अत्रि,	16. विष्णु,
17. आपस्तम्ब और	18. हारीत।

इनमें यम की संख्या पाँचवें स्थान पर है। वर्तमान में यमस्मृति के नाम से तीन पाठ मिलते हैं–

1. यमस्मृति ,
2. लघु यमस्मृति
3. बृहद्–यमस्मृति

इनमें से **'यमस्मृति'**[16] में प्रायश्चित विधान के अन्तर्गत चारों वर्णों के लिए विहित प्रायश्चित एवं उनकी शुद्धि का विधान बताया गया है–

श्रुत्यस्मृत्युदितं धर्मवर्णानामनुपूर्वश:।
प्राब्रवीदृषिभि: पृष्टो मुनीनामग्रणीर्यम:॥[17]

इसमें शातातप के मत का उल्लेख होने से यह उसकी परवर्ती कृति ज्ञात होती है–

"...स्यादिति शतातपोऽब्रवीत्।"[18]

यह अन्यान्य शास्त्रों पर आश्रित भी रही है।

13 दानमयूख : उपर्युक्त, पृष्ठ 111 14 अपराजितपृच्छा : सूत्र 213, 11 15 रूपमण्डन : 2.33.
16 स्मृति सन्दर्भ : गुरुमण्डलग्रन्थ माला, कोलकाता, 1953ई., भाग 4, पृ.सं. 2084-2090 तक
17 स्मृतिसन्दर्भ : उपर्युक्त, लघुयमस्मृति, 1, पृ. 2091. 18 स्मृति सन्दर्भ : लघुयमस्मृति : श्लोक 11, पृ. 2092.

'लघु यमस्मृति'[19] में विभिन्न प्रकार के प्रायश्चितों के वर्णन के साथ ही यज्ञ, तालाब व कूपादि निर्माण व उद्धार का विधान आया है। कहा गया है कि इष्ट और पूर्त्तकर्म ब्राह्मण को प्रयत्नपूर्वक करने चाहिए। इष्ट के द्वारा तो स्वर्ग की प्राप्ति होती है और पूर्त्तकर्म से मोक्ष मिलता है। इष्ट वित्त की अपेक्षा करता है और तड़ाग आदि के श्रमजन्य कार्य पूर्त कहे जाते हैं। उद्यान तथा विशेषकर नहर आदि जलस्रोत के कार्य, बावड़ी, कुआँ, तालाब तथा देवालय आदि के कार्य तथा जीर्णोद्धार से पूर्त के फल मिलते हैं। यथा–

इष्टापूर्तन्तु कर्त्तव्यं ब्राह्मणेन प्रयत्नतः।
इष्टेन लभते स्वर्गं पूर्वे मोक्षं समश्नुते॥
वित्तापेक्षं भवेदिष्टं तडागं पूर्तमुच्यते।
आरामश्च विशेषेण देवद्रोण्यस्तथैव च॥
वापीकूपतडागानि देवतायतनानि च।
पतितान्युद्धरेद्यत्तु स पूर्त फलमश्नुते॥[20]

ये ही श्लोक पूर्वोक्त यमस्मृति में भी आए हैं।

इसी प्रकार **'बृहद्-यमस्मृति'**[21] में नानाविध प्रायश्चित्त, चान्द्रायण व्रत की विधि, दस वर्ष तक के बालकों से प्रायश्चित न करवाने, उन्होंने यदि पाप किया हो तो उनके माता-पिता एवं भाई से प्रायश्चित करवाने का निर्देश है। इसी प्रकार, कन्या के रजोदर्शन से माता-पिता को नरक प्राप्ति, श्राद्ध में वर्जनीय ब्राह्मण और सत्पात्र के लक्षण बताए गए हैं। गोवध प्रायश्चित भी इसमें आया है। इसके अतिरिक्त धर्मशास्त्र को जाने विना प्रायश्चित के लिए निर्णय देने का पाप, सत्पात्र ब्राह्मण के लक्षण भी दिए गए हैं। श्राद्धकाल में श्राद्ध करने वाले की स्त्री रजस्वला हो जाए तो उसका निर्णय तथा जिनकी सन्तान हो, उसके विभाग का दिग्दर्शन भी किया गया है।[22]

***

19 स्मृतिसन्दर्भ : उपर्युक्त, पृ. 2091-2100.
20 स्मृतिसन्दर्भ : उपर्युक्त, लघु यमस्मृति, 68-70, पृ. 2097.
21 स्मृतिसन्दर्भ : उपर्युक्त, पृ. 2101-2018.
22 स्मृति सन्दर्भ: सातवाँ खण्ड (विषय सूची) पृष्ठसन्दर्भ- 2083, 2091, 2101, 2103, 2104, 2110, 2116, पृष्ठ 131-132.

यमी
20 वीं सदी।
श्यामलाजी मन्दिर, गुजरात,

यमुना
19वीं शती
राष्ट्रीय संग्रहालय, नेपाल
साभार: www.wisdomlib.org/

जीव की नरक की यातनाएँ - जावा तक भी मौजूद!

श्रीकृष्ण जुगनू

पारलौकिक मान्यताओं में स्वर्ग और नरक की धारणा बड़ी ही पुरानी है और लगभग सभी धार्मिक मान्यताओं में मिलती है। इन मान्यताओं ने इहलोक को मर्यादित जीने और मूल्यपरक जीवन की अच्छी नसीहत दी है, जीवन को समझदार बनाकर अपने आचरण से पड़ौसी तक को प्रसन्न रखने का प्रयास होता रहा है, वरना कहा जाता है कि मरने पर यमदूत वैतरणी के पार यमराज के दरबार में अच्छे बुरे कर्मों का लेखा-जोखा चित्रगुप्त के हाथों खुलवाएंगे। जीवन में जैसा भी अनुचित किया, उसका फल भोगना ही पड़ेगा।

नीति वाक्यामृत आदि ग्रन्थों से पता चलता है कि मध्यकाल में लोग यमपट का वाचन करते थे। वे अपने हाथ में यमलोक की यातनाओं को चित्रित किए एक विस्तृत फलक रखते थे और लोगों को दिखाकर इहलोक को सार्थक करने के लिए समझाइश करते थे।

इसी काल में लिखे गए पुराणों यमलोक का वर्णन अनिवार्य सा जान पड़ता है। यह प्रयास स्मृतियों ने आरंभ किया तो पुराणों, उपपुराणों में भी खूब लिखा गया। चौरासी हजार प्रकार की यम यातनाओं का सन्दर्भ देने का प्रयास किया गया, हालांकि यातनाएँ वैसी ही लगती है जैसी कि पृथ्वीलोक में दिखाई देती है। यमदूतो के हथियार भी वे ही है जो यहां देखने को मिलते थे, वे ही ईख या तिल के कोल्हू में पिराई, मुद्गरों से पिटाई, कुंत का आरपार होना, शिवपुराण, शिवधर्मोत्तरपुराण, पदमपुराण आदि में तो बड़ी संख्या में श्लोक मिलते हैं, गरुड पुराण का दूसरा खंड तो लिखा भी इसी उद्देश्य से गया है।

बौद्ध मान्यताओं में भी कर्मविभाग का सन्दर्भ मिलता है, जैसा कि मित्रवर Aditya Banerjee मानते हैं। उन्होंने इंडोनेशिया के केंद्रिय जावा स्थित बोरोबुदूर मन्दिर की यह तस्वीर भेजी है, लगता है ये मान्यताएँ वहाँ तक भी लोकप्रिय थी।

उन्होंने लिखा है - "Laws pertaining to our daily Life's ".This is an also rare encasement providing one complete illustration of cause and effect. So let's take an looks shall we I Give

पट्टचित्र जो 'फड़ चितरावन' कहलाए, राजस्थान की उस समय की परिपाटी को संजोए हुए हैं जब कि यमपट्ट के पाठक (यमघंटिक) घंटी बजा बजाकर घर घर जाते और कर्मानुसार नरक यातनाओं का व्यौरा देते थे। भारतीयों को यह नवाचार अनोखा लगा तो धर्मपरीक्षा, नीति वाक्यामृत, चतुर्भाणि, आदि में संकेत दिया। पट्ट लोकप्रिय हो गए थे, इसी कारण उनके पाठ नहीं दिए गए लेकिन पुराणों ने नरकों का विवरण दिया।

You All.. The law of karma (Karmavibhangga) : There are depictions of blameworthy activities, from gossip to murder, with their corresponding punishments. There are also praiseworthy activities, that include charity and pilgrimage to sanctuaries, and their subsequent rewards. The pains of hell and the pleasure of heaven are also illustrated. There are scenes of daily life, complete with the full panorama of samsara (the endless cycle of birth and death).

पिछले दिनों शिवधर्मोत्तर के अनुवाद के दौरान चल रहे प्रसंग के क्रम में यह तस्वीर मिली तो लगा कि ये मान्यताएँ कहां-कहां रही हैं, आप भी खोजियेगा।

***

कार्तिक और अगहन के वे खास 16 दिन

यमदंष्ट्रा काल से सावधान!

(अपने स्वास्थ्य का रखें ध्यान)

डॉ. विनोद कुमार जोशी
एमेरिटस प्रोफेसर, द्रव्यगुण विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

आयुर्वेद हमारी भारतीय परम्परा है, जिसका पहला उद्देश्य आहार-विहार में संयम रखने का उपदेश देकर मनुष्य को स्वस्थ रखना है, ताकि औषधि की आवश्यकता ही न हो। इसके लिए आयुर्वेद के प्राचीन से लेकर मध्यकाल तक के शास्त्रकारों ने विभिन्न प्रकार का विधान ऋतुचर्या के रूप में किया है। इसी क्रम में कार्तिक मास के अंतिम आठ दिन और अग्रहायण के प्रारम्भिक 8 दिनों की अवधि को 'यमदंष्ट्रा काल' कहा गया है। इस अवधि में ऋतुचर्या का पालन नहीं करने पर श्वास रोग की संभावना होती है और उससे मरणान्तिक कष्ट होता है। इसीलिए शास्त्रकारों ने ऋतुचर्या के पालन हेतु प्ररोचना के रूप में इसे भयोत्पादक नाम दिया है।

'यमदंष्ट्रा' अर्थात् 'यम का दाढ़' का सर्वप्रथम उल्लेख मध्यकालीन कृति 'शार्ङ्गधर संहिता' में मिलता है। शार्ङ्गधर द्वारा आयुर्वेद के इस ग्रन्थ की रचना 13वीं शताब्दी में की गयी। यह संहिता औषधियों के निर्माण में उल्लेखनीय मानी जाती है। उन्होंने भैषज्य निर्माण विधियों का विवेचन किया है और अनेक नवीन औषधि द्रव्यों यथा– बब्बूल, महानिम्ब, पाताल-गरुड़ी, रुदन्ती आदि का प्रयोग बताया है। नाड़ी-परीक्षा का अनुभवात्मक ज्ञान सर्वप्रथम इसी संहिता में आया है।

'काल' किसे कहते हैं

'यमदंष्ट्रा' को समझने से पूर्व काल के सम्बन्ध में जानना उचित होगा। काल निरन्तर गतिमान है। सृष्टि के आरम्भिक काल से ही और इसकी ईकाई को क्षण से जाना जाता है। क्षण कभी रुकता नहीं है। जो क्षण वर्तमान है वह अगले ही क्षण भूतकाल हो जाता है और आनेवाला क्षण (भविष्यत् काल) अगले ही क्षण वर्तमान काल में बदल जाता है।

काल का नामोल्लेख 'विष्णुसहस्रनाम' में श्रीहरि का एक नाम के रूप में आया है–

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः।
उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः।।[1]

1. विष्णुसहस्रनाम : श्लोक संख्या 58.

उक्त काल की व्याख्या श्रीमदादिशंकराचार्य ने इस प्रकार की है–

"कलयति सर्वमिति कालः।"[2]

अर्थात् सबकी कलना (गणना) करने के कारण काल है। इसकी पुष्टि गीता के दसवें अध्याय में मिलती है **"कालः कलयतामहम्"**[3], जिसे भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को समझाया है। उसी अध्याय में आगे स्पष्ट करते हुए कहते हैं– **"अहमेवाक्षयः कालो।"**[4] अर्थात् मैं ही अविनाशी काल हूँ।

आदि शंकराचार्य ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है– **"अक्षयः अक्षीणः कालः प्रसिद्धक्षणाद्याद्यः अथवा परमेश्वरः कालस्य अपि कालः अस्मि।"** अर्थात् मैं ही अविनाशी काल– जो क्षण घड़ी आदि नामों से प्रसिद्ध है, वह समय अथवा काल का भी काल परमेश्वर हूँ।

उक्त सन्दर्भों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि काल अनादि है, निरन्तर गतिशील है, अविनाशी है और सबकी गणना करने के कारण काल है।

काल-गणना का उल्लेख अथर्ववेद में इस प्रकार मिलता है जिसे कल्प या ब्रह्मा का एक दिन माना गया है

शतं तेऽयुतं हायनान्द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।
इन्द्राग्नी विश्वे देवास्तेऽनुमन्यन्तामहृणीयमानाः॥[5]

प्रो. ठाकुर प्रसाद वर्मा ने उक्त सन्दर्भ की व्याख्या इस प्रकार से की है–

"उस (कर्ता) ने शत अयुत (एक अयुत दस हजार वर्षों का होता है अतः सौ अयुत का अर्थ दश लाख की संख्या) के दो, तीन और चार वर्षों का युग बनाया (जिसमें) विश्व देवों की इन्द्राग्नि घटती (ह्रीयमाण होती) हुई समाप्त हो जायेगी।"[6]

काल अनादि है, निरन्तर गतिशील है, अविनाशी है और सबकी गणना करने के कारण काल है।

सौ अयुत अर्थात् दश लाख वर्षों में **अंकानां वामतो गतिः** के अनुसार बाईं ओर क्रमशः 2, 3 और 4 लिखें तो 4 अरब 32 करोड़ वर्ष (हायन्) बनते हैं। पुराणों के अनुसार वर्षों की यह संख्या एक कल्प की है जो ब्रह्मा का एक दिन होता है, यही इस धरती का सम्पूर्ण जीवन काल है, जिसमें 14 मन्वन्तर होते हैं। अब तक इसके 6 मन्वन्तर व्यतीत हो चुके हैं।

प्रत्येक मन्वन्तर में अपना एक देवमण्डल जन्म लेता है और नया मन्वन्तर आने पर पूरी तरह समाप्त हो जाता है तथा नया देवमण्डल अस्तित्व में आ जाता है। इनमें

तत्त्व बदलते हैं– 1. मनु, 2. देवमण्डल, 3. मनुपुत्र अर्थात् जीव सृष्टि, 4. इन्द्र (सूर्य की ऊर्जा), 5. सप्तर्षि (सूर्य की सात किरणें) तथा 6. विष्णु के अंशावतार।

इससे स्पष्ट होता है कि काल-गणना सृष्टि संचालन हेतु महत्त्वपूर्ण ही नहीं आवश्यक भी है। इसीलिए ब्रह्मा का एक दिन पृथ्वी के 4 अरब 32 करोड़ वर्ष के समतुल्य कालावधि है। उक्त कालावधि में ब्रह्मा सृष्टि के प्रारम्भ से रचयिता, विष्णु पालक, तथा महेश संहर्ता

2 विष्णुसहस्रनाम : नाम संख्या 418, कालः का भाष्य
3 श्रीमद्भगवद्-गीता : 10.30.
4 गीता : 10.33.
5 अथर्ववेद : 8.2.21.
6 ठाकुर प्रसाद वर्मा : ऋग्वेद के सात सूक्तों का वैज्ञानिक विवेचन, बी. आर पब्लिसिंग कॉर्पोरेशन, दिल्ली -110052 (2014)

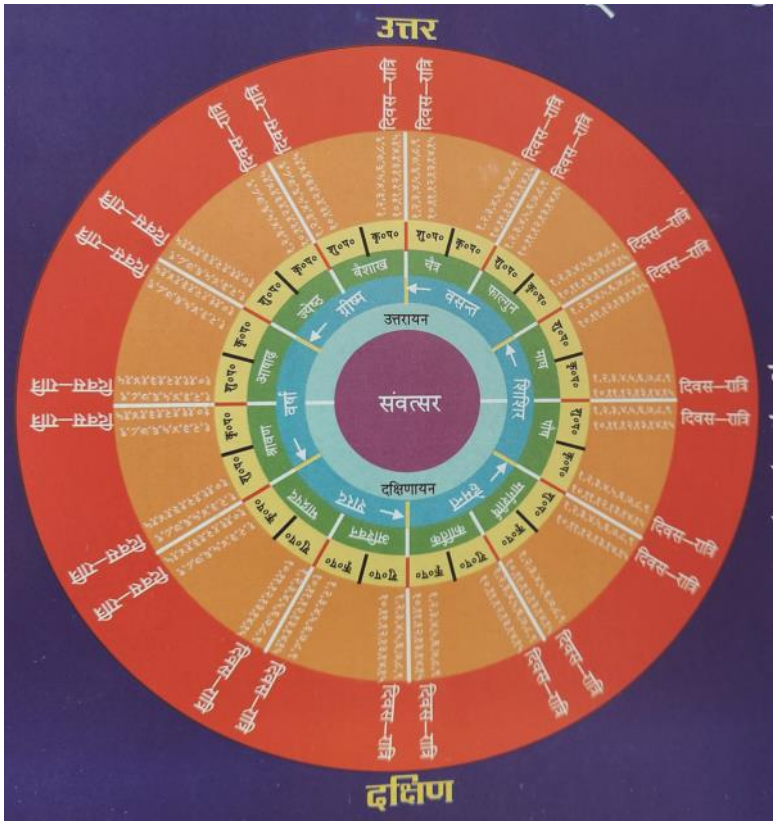

कालचक्र की गति

का कार्य करते हैं। पृथ्वी में एक वर्ष की कालावधि को 'संवत्सर' नाम से जाना जाता है। विष्णुसहस्रनाम में 'संवत्सर' भी सच्चिदानन्द (प्रकाश रूप चिद् आनन्द) का एक नाम परिलक्षित होता है, जिसकी व्याख्या आदि शंकराचार्यजी ने इस प्रकार की है– **"संवसन्ति भूतान्यस्मिन्निति संवत्सरः"**[7] अर्थात् सब भूत (प्राणी) इनमें बसते हैं इसलिए संवत्सर है।

संवत्सर को अथर्ववेद के उपाङ्ग आयुर्वेद के मूल ग्रन्थों में से एक सुश्रुत-संहिता में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–

तस्य संवत्सरात्मनो भगवानादित्यो गति-विशेषेणाक्षि-निमेष-काष्ठा-कला-मुहूर्त्ताहोरात्र-पक्ष-मासर्त्वयन-संवत्सर-युग-प्रविभागं करोति।[8]

अर्थात् संवत्सर रूपी काल का भगवान् सूर्य अपनी गति विशेष से अक्षिनिमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, इस प्रकार विभाग करते हैं।

पुनश्च उक्त अध्याय के तीसरे गद्यांश में काल की व्याख्या इस प्रकार की गयी है-

कालो हि नाम (भगवान्) स्वयंभूरनादिमध्यनिधनः। अत्र रसव्यापत्संपत्ती जीवितमरणे च मनुष्याणां आयत्ते। स च सूक्ष्माणामपि कलां न लीयत इति कालः, संकलयति कालयति वा भूतानीति कालः।[9]

अर्थात् काल ही नाम भगवान् है। स्वयं उत्पन्न हुआ है, आदि मध्य, अन्त से रहित है, द्रव्यादि रसों से विपन्नता और सम्पन्नता तथा प्राणियों का जीवन और मरण उस काल के ही अधीन है। वह काल अपनी सूक्ष्मकला तक भी नहीं ठहरता अतः उसे काल कहते हैं। अथवा प्राणियों का संकलन, सुख-दुःख के साथ संयोग या ग्रहण करता है किंवा प्राणियों का संहार करते है इसलिए उसे काल कहते हैं। काल को 'स्वयम्भू' भी कहा गया है। अर्थात् वह स्वयं ही उत्पन्न होता है। स्वयंभू यह नाम परमात्मा का भी विष्णुसहस्रनाम में आया है। इससे सिद्ध होता है कि काल ईश्वर ही है।

7 विष्णु सहस्रनाम : श्लोक संख्या 58 नाम संख्या 422 की व्याख्या में
8 सुश्रुत संहिता : सूत्रस्थान, 6.4
9 सुश्रुत संहिता : सूत्रस्थान, 6.3

"कार्तिक मास के अन्तिम आठ दिन (कार्तिक शुक्लपक्ष अष्टमी से कार्तिक पूर्णिमा तक) तथा मार्गशीर्ष मास के प्रारम्भिक आठ दिन (मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष प्रतिपदा से कृष्णपक्ष अष्टमी तक कुल 16 दिन 'यमदंष्ट्रा' कहलाता है। उक्त समय में अल्प आहार लेने वाला ही सुखपूर्वक जीता है।

काल ही का प्रविभाग संवत्सर भी संहिताओं में आया है। संवत्सर भारतीय संस्कृति में एक वर्ष की कालावधि को माना गया है, जिसमें आदित्य की गति के कारण उत्तरायण तथा दक्षिणायण ये दो छह मास के काल निर्धारित हैं। उत्तर दिशा की ओर सूर्य भ्रमण को उत्तरायण कहते हैं, जिसमें शिशिर, वसन्त एवं ग्रीष्म ऋतुएँ समाविष्ट है तथा दक्षिणायन में वर्षा, शरद् तथा हेमन्त हैं। इस प्रकार षड् ऋतुओं का चक्र निर्धारित है। प्रत्येक ऋतु में दो-दो मास आते हैं जो निम्नवत् हैं–

उत्तरायण

शिशिर–	माघ एवं फाल्गुन
वसन्त–	चैत्र एवं वैशाख
ग्रीष्म–	ज्येष्ठ एवं आषाढ़

दक्षिणायन

वर्षा–	श्रावण एवं भाद्रपद
शरद्–	आश्विन एवं कार्तिक
हेमन्त–	मार्गशीर्ष एवं पौष

वस्तुतः आयुर्वेद में ऋतुओं का महत्त्व स्वस्थ दीर्घायु जीवन हेतु आवश्यक कहा गया है। ज्ञात हो कि त्रिदोष– वात पित्त एवं कफ की साम्यावस्था को बनाये रखने के लिए ऋतुचर्या नाम से चरक संहिता, सुश्रुत संहिता में जो कि प्राचीन आदि ग्रन्थ हैं विस्तृत वर्णन है। परवर्ती ग्रन्थों– अष्टाङ्गहृदय, अष्टाङ्ग संग्रह जो मध्यकालीन रचनाएँ हैं, में भी ऋतुचर्या का वर्णन स्वस्थ जीवन धारण हेतु आया है। सभी ग्रन्थों में वात, पित्त एवं कफ –दोषत्रय का ऋतु विशेष से संचय, प्रकोप तथा स्वस्थ रहने के उपाय आहार-विहार के आधार पर मागदर्शन किया गया है, जो सभी के लिए अनुकरणीय है, जिसे सभी को जानना चाहिए।

यमदंष्ट्रा का काल

उक्त काल शरद ऋतु के कार्तिक मास तथा मार्गशीर्ष मास के सन्धिकाल के अन्तर्गत आता है जिसका विवरण शार्ङ्गधर संहिता में प्रथम खण्ड के द्वितीय अध्याय में इस प्रकार हष्टिगोचर होता है

कार्तिकस्य दिनान्यष्टावष्टावाग्रहणस्य च।
यमदंष्ट्रा समाख्याता स्वल्पभुक्तो हि जीवति॥[10]

अर्थात् कार्तिक मास के अन्तिम आठ दिन

10 शार्ङ्गधराचार्य : शार्ङ्गधर संहिता, 2.25. जीवानन्द विद्यासागर (सम्पादक), कलकत्ता 1874ई., पृ. 9.

(कार्तिक शुक्लपक्ष अष्टमी से कार्तिक पूर्णिमा तक) तथा मार्गशीर्ष मास के प्रारम्भिक आठ दिन (मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष प्रतिपदा से कृष्णपक्ष अष्टमी तक कुल 16 दिन 'यमदंष्ट्रा' कहलाता है। उक्त समय में अल्प आहार भोगी ही सुखपूर्वक जीता है। उक्त संदर्भ से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि शार्ङ्गधर ने अपने चिकित्सकीय अनुभव से 'यमदंष्ट्रा' संज्ञा का उल्लेख किया, जो कि महत्त्वपूर्ण है।

ऋतुचर्या के आधार पर विचार करने पर उक्त कालावधि शरद ऋतु के अन्तर्गत आती है। शरद ऋत् को पित्तदोष प्रकोप काल कहा गया है। इस समय शरीरस्थ बल मध्यम होता है और जठराग्नि बल भी मध्यम होता है। अत: उस समय आमाशयस्थ अग्नि (जठराग्नि) को विचार में रखते हुए– मधुर, तिक्त, लघु, शीत द्रव्य– यव, गोधूम (गेहूँ, भुट्टा (मूंग), गोदुग्ध इक्षु (गन्ना) आदि का सेवन करना चाहिए तथा पथ्य विहार के रूप में रात्रि में चन्द्रमा की किरणों का सेवन (पित्त-शमनकारक चन्दनादि का लेप (शीतलकर) तथा हल्के वस्त्रों को धारण करना चाहिए। विशेष रूप से पित्तवर्धक आहार-विहार जैसे– अम्ल, लवण, कटु, तीक्ष्ण, ऊष्ण आहार-द्रव्य, यथा– हींग, तेल, आर्द्रक, लशुन, मिर्च का सेवन तथा धूप का सेवन नही करना चाहिए। रात्रि जागरण तथा दिवाशयन का प्रभाव भी जठराग्नि को विकृत करता है। यदि उपरोक्त आहार-विहार का सेवन करता है तो पित्तदोष और अधिक प्रकुपित हो जाता है। उक्त काल में श्वास रोगियों की संख्या अधिक देखी जाती है।

चरक-संहिता में भगवान आत्रेय पुनर्वसु ने हिक्का, श्वासरोग को उस प्रकार वर्णन कर कहा है–

कफवातात्मकावेतौ पित्तस्थानसमुद्भवौ।
हृदयस्य रसादीनां धातूनां चोपशोषणौ ॥7॥
तस्मात् साधारणावेतौ मतौ परमदुर्जयौ।
मिथ्योपचरितौ क्रुद्धौ हत आशीविषाविव॥8॥[11]

अर्थात् ये दोनों (रोग) पित्तस्थान (आमाशय) में

यमदंष्ट्रा काल कार्तिक शुक्लपक्ष अष्टमी से मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष अष्टमी तक

क्या न करें	क्या करें
• भोजन में- हींग, तेल, अदरख, लहसुन, मिर्च का कम से कम व्यवहार करें। • धूप में न रहें। • रात में जागरण कम से कम करें • दिन में सोना नहीं चाहिए	• भोजन में- जौ, गेहूँ, मूंग, गाय का दूध, गन्ना का रस और आँवले का अधिक से अधिक व्यवहार करें। खीर खाने से लाभ होता है। • चन्द्रमा की चाँदनी का सेवन करें। • रात में भरपूर नींद लें।

11 चरक संहिता : चिकित्सा स्थान, 17. 7-8, जयदेव विद्यालंकार (सम्पादक) उत्तर भाग, मोतीलाल बनारसीदास, नवम संस्करण 1975ई., पृ. 266. 12 चरक संहिता : उपर्युक्त, चिकित्सास्थान, 17.5.

उत्पन्न होने वाले हैं, कफ एवं वात से उत्पन होने वाले हैं और हृदय के रस– रक्त और ओज (रसादीनां) का शोषण करने वाले होते हैं। अतः दोनों एक समान स्वरूप होने के कारण अत्यधिक दुर्जय माने गये है। मिथ्या-उपचार किये जाते हुए ये दोनों रोग कोधित हुए दृष्टिसर्प और निःश्वासर्प के समान (आशीविष) शीघ्र मार देते हैं।

उपर्युक्त आधार पर एक चिकित्सक के रूप में अनुभव के आधार पर श्वास रोगियों की संख्या को देखते हुए उक्त कालावधि को 'यमदंष्ट्रा' संज्ञा से उल्लिखित किया जिसका अर्थ है– 'यम (मृत्यु के देवता) दंष्ट्रा (दाढ़/मुख) में बने रहना'। उक्त कथन को 'हिक्का-श्वास-चिकित्सा अध्याय' में आत्रेय पुनर्वसु ने स्पष्ट कहा है कि श्वास और हिक्का प्राणों को शीघ्र नष्ट करते हैं–

यथा श्वासश्च हिक्का च प्राणानाशु निकृन्ततः।[12]

श्वास रोगी सर्वदा मृत्यु के भय से जीता है, क्योंकि प्राणवायु का उसे संकट दिखायी देता है।

यमदंष्ट्रा काल में स्वस्थ रहने का उपाय

प्रकृति में शरद ऋतु काल में आमलकी (आँवला) के फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं, जिसे बाजार से लेकर पित्त के शमन के लिए सभी को प्रयोग करना चाहिए। आमलकी के फल पञ्चरस (मधुर, अम्ल, तिक्त, कटु तथा कषाय) होते हैं किन्तु वह लवण से रहित होता है। साथ ही, वीर्य में शीत होता है, जो पित्त कोप का शमन करता है। शरद् पूर्णिमा को परम्परा से खीर (पायस) का सेवन भी किया जाता है। ज्ञात हो कि शरद पूर्णिमा की रात्रि में खीर (गोदुग्ध के साथ चावल का पाक कर) बनाकर, चन्द्रमा की किरणों को प्राप्त करने हेतु खुले आकाश के नीचे रखा जाता है। उक्त खीर अमृत तुल्य गुणों (शैत्य, स्निग्ध) के कारण प्रकुपित पित्त दोष का शमन करता है।

सारांश :

शार्ङ्गधराचार्य ने कार्तिक शुक्ल पक्ष के अन्तिम आठ दिवस तथा मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष के प्रारम्भिक आठ दिवस कुल सोलह दिवस को 'यमदंष्ट्रा' अर्थात् 'मृत्युमुख' या 'मृत्युदाढ़' की संज्ञा दी है, जो उचित प्रतीत होता है। उस कालावधि में प्रकुपित पित्त दोष के कारण श्वासरोगियों की संख्या सर्वाधिक दृष्टिगोचर होती है। एक बार श्वास रोग हो जाने पर ऋतुसन्धि काल में पुनः पुनः अपथ्य पित्तवर्धक आहार के कारण प्रश्वास रोग बढ़ जाता है, जिससे प्राणवायु का संकट बना रहता है। इस कारण से श्वास रोगी को मृत्यु का भय हो जाता है।

सन् 2022 में कब है यमदंष्ट्रा का काल?

इस वर्ष यमदंष्ट्रा काल 01 नवम्बर 2022 (कार्तिक शुक्ल पक्ष अष्टमी से 16 नवम्बर 2022 (मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष अष्टमी) तक होगा। अतः सुखी जीवन-यापन के लिए सभी को अपनी प्रकृति का ध्यान रखते हुए स्वल्प भोजन (पथ्य-आहार-विहार) करना उचित होगा। साथ ही प्रश्वास रोगी का ध्यान रखते हुए

12 चरक संहिता : उपर्युक्त, चिकित्सास्थान, 17.5.

इस वर्ष 01 नवम्बर 2022 से 16 नवम्बर 2022 तक 'यमदंष्ट्रा काल' पड़ रहा है। इस बीच अपने स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखें।

उसे पित्तप्रकोपक आहार-विहार नही देना चाहिए। सर्वदा यह स्मरण में रहे कि भविष्य में भी दिवस का काल कार्तिक शुक्ल पक्ष अष्टमी से माशेशीर्ष कृष्णपक्ष अष्टमी को ही होगा, न कि 01 नवम्बर से 16 नवम्बर तक, क्योंकि आंग्लभाषित कलेण्डर की तारीख बदलती रहेगी।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि काल का महत्त्व सृष्टि के आरम्भ से ही है, जो कि निरन्तर गतिशील है। वह स्वयंभू है, जिसकी गणना आवश्यक है। अथर्ववेद के उपाङ्ग आयुर्वेद की मूल सहिताओं में एक वर्ष के काल को संवत्सर कहा है, जिसके प्रविभाग उत्तरायण तथा दक्षिणायन आदित्य की गति पर निर्धारित किये है। उक्त कालद्वय में षड् ऋतुओं का वर्णन किया गया है। आयुर्वेद में स्वस्थ दीर्घायु जीवन-यापन हेतु ऋतुचर्या का विस्तृत वर्णन है। उन्ही ऋतु में से एक शरद काल में जब पित्त का प्रकोप होता है, यमदंष्टा का वर्णन सर्वप्रथम शार्ङ्गधर संहिता में वर्णित है। उस सोलह दिवस की कालावधि में सावधान रहकर स्वस्थ जीवन-यापन सभी को करना चाहिए। इस प्रकार सभी के जीवन में काल का अत्यन्त महत्त्व है, इसीलिए काल को भगवान् की संज्ञा दी है।

***

आधार ग्रन्थ

1. श्रीमन्महाभारतान्तर्गत, श्रीविष्णुसहस्रनाम, श्रीमदाद्यशंकराचार्य कृत भाष्य और हिन्दी-अनुवादसहित, गीताप्रेस, गोरखपुर। स. 2056 तेरहवा संस्करण
2. ठाकुर प्रसाद वर्मा : ऋग्वेद के सात सूक्तों का वैज्ञानिक विवेचन, बी. आर पब्लिसिंग कॉर्पोरेशन, दिल्ली - 110052 (2014)
3. श्रीमद्भगवद्-गीता, शांकरभाष्य हिन्दी अनुवाद- सहित मूल श्लोक, भाष्य, भाष्यार्थ टिप्पणी तथा श्लोकों के पदों की अकारादि क्रम-सूचीसहित, अनुवादक - श्रीहरिकृष्णदास गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर,सं. 2053, बीसवाँ संस्करण।
4. सुश्रुत (1982), सुश्रुत संहिता- श्रीडल्हण कृत निबन्धसंग्रह संस्कृत व्याख्या, चौखम्बा ओरियण्टालिया, वाराणसी और दिल्ली
5. श्रीशार्ङ्गधराचार्य : शार्ङ्गधरसंहिता, आढमल्ल की दीपिका व्याख्या तथा काशीराम की गूढार्थ-दीपिका, संस्कृत व्याख्या सहित, सम्पादित पं. परशुराम शास्त्री विद्यासागर, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी(2018)
6. अग्निवेश, चरक एवं दृढ़बल (1992) चरक संहिता, श्रीचक्रपाणिदत्त विरचित आयुर्वेददीपिका संस्कृत व्याख्या, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

***

वेद-पुराण में यम के अर्थ

श्री अरुण कुमार उपाध्याय
भारतीय पुलिस सेवा (अ. प्रा.)सी-/47, (हवाई अड्डा के निकट) पलासपल्ली, भुवनेश्वर।

विडम्बना है कि पाश्चात्त्य विज्ञान की सीमा तथा उसके आलोक में वेद तथा पुराणों के जो स्थल 'फिट' नहीं बैठते, उन्हें पाश्चात्त्य विद्वानों तथा उनके अनुयायी भारतीय लेखकों ने पुराकथाएँ कहकर तिरस्कृत कर दिया है। लेकिन, यदि हम पौराणिक मापदण्ड तथा गणित ज्योतिष के आधार पर सूक्ष्म विवेचन करें तो पता चलता है कि पुराणों के वे वर्णन वैज्ञानिक हैं तथा उनके आधार पर हम ठोस निष्कर्ष निकाल सकते हैं। इसी सन्दर्भ में यहाँ यम तथा यमलोक का विवेचन किया गया है। पुराणों में वैज्ञानिक तथ्यों के प्रसिद्ध अध्येता श्री उपाध्यायजी ने यहाँ वैदिक साहित्य, सूर्य-सिद्धान्त, भागवत पुराण, विष्णु पुराण आदि के आधार पर यम तथा यमलोक की वास्तविकता दिखायी तथा श्राद्धकर्म के महत्त्व को प्रतिपादित किया है।

यम के अर्थ

ऋग्वेद, मण्डल 10, सूक्त 14, 15 यम सूक्त कहे जाते हैं– सूक्त 15 के ऋषि वैवस्वत यम ही हैं, सूक्त 15 के ऋषि उनके वंशज शङ्ख यामायन हैं। ये विवस्वान् पुत्र यम मनुष्य हैं और उनके वंशज (यामायन) शङ्ख हैं। किन्तु उनके द्वारा प्रतिपादित वर्णन सौरमण्डल के यमक्षेत्र का है। शनि का प्रकाशित भाग धर्म और अन्धकार भाग या यूरेनस यम है।

भागवत पुराण स्कन्ध 5 में चक्राकार पृथ्वी का वर्णन है, जिसका भीतरी भाग 50 करोड़ योजन व्यास का है। (यहाँ पृथ्वी का व्यास 12800 किमी. = 1000 योजन, अर्थात् 1 योजन = 12.8 किमी.)– इसे लोक (प्रकाशित) भाग तथा 100 कोटि योजन व्यास तक का बाहरी भाग अलोक (अप्रकाशित) कहा गया है।

भागवत-पुराण में इस विस्तार का वर्णन इस प्रकार है–

ततः परस्ताल्लोकालोकनामाचलो लोकालोकयोरन्तराले परित उपक्षिप्तः। यावन्मानसोत्तरमेर्वोरन्तरं तावती भूमिः काञ्चन्यन्यादर्शतलोपमा यस्यां प्रहितः। पदार्थो न कथञ्चित्पुनः प्रत्युपलभ्यते तस्मात्सर्वसत्त्वपरिहृतासीत्। लोकालोक इति समाख्या यदनेनाचलेन लोकालोकस्यान्तर्वर्तिनावस्थाप्यते। स

लोकत्रयान्ते परित ईश्वरेण विहितो यस्मात्सूर्यादीनां ध्रुवापवर्गाणां ज्योतिर्गणानां गभस्तयोऽर्वाचीनांस्त्रीन्लोकानावितन्वाना न कदाचित्पराचीना भवितुमुत्सहन्ते तावदुन्नहनायामः। एतावान्लोकविन्यासो मानलक्षणसंस्थाभिर्विचिन्तितः कविभिः स तु पञ्चाशत्कोटिगणितस्य भूगोलस्य तुरीय-भागोऽयं लोकालोकाचलः।[1]

(उपर्युक्त उद्धरण श्रीशुकदेवजी की उक्ति है, जिसमें वे बतलाते हैं कि इस मीठे जल के समुद्र के पार लोकालोक नाम पर्वत है, उसे लोक (सूर्य से प्रकाशित) अलोक (सूर्य के प्रकाश हित) स्थान के मध्य में उनकी मर्यादा के हेतु भगवान ने सबके चारो ओर घेरा दे रक्खा है। जितना मानसोत्तर और मेरु पर्वत में अंतर है उतने ही विस्तार की भूमि मीठे समुद्र के दूसरी ओर है, उसमें जीवधारी भी रहते है, उससे परे सुवर्ण की भूमि है और वह दर्पण के समान निर्मल है। उस भूमि में गया हुआ पदार्थ फिर नहीं प्राप्त होता इससे वह सब प्राणियों से रहित है। इसके आगे लोकालोक नामक पर्वत जो लोक और अलोक के बीच में स्थित है। इन तीनों लोकों के अन्त में त्रिलोकी की सीमा के रूप में इस पर्वत को ईश्वर ने त्रिलोकी के चारो ओर अवस्थित किया है। इस पर्वत की इतनी ऊँचाई चौड़ाई है कि सूर्य से लेकर ध्रुव तक सम्पूर्ण तेजस्वी पदार्थों को तथा जगत् को प्रकाशित करने वाली किरण एक छोड़ से दूसरी छोड़ तक नहीं पहुँच सकती है। विद्वानों ने लोक की रचना, प्रमाण लक्षण और स्थिति से इस भाँति निश्चय किया है। यह पर्वत, पचास कोटि योजन के भूगोल का चतुर्थांश अर्थात् साढे बारह कोटि योजन सुमेरु से चारो ओर दूर है। सब जगत् के गुरु भगवान् ब्रह्माजी ने इसके ऊपर, चारों दिशाओं में ऋषभ, पुष्करचूड़, वामन और अपराजित नामक चार दिग्गज रख छोड़े हैं, उन्हीं से सब सृष्टि की स्थिति रहती है। महापुरुष, ऐश्वर्यवान् भगवान् इन दिग्गज और इन्द्रादिक लोकपालों की शक्तियों के बढ़ाने तथा सब सृष्टि के कल्याण के हेतु इस उत्तम पर्वत पर विराजते हैं और धर्म, ज्ञान, वैराग्य भौर प्रभावादिक अर्थसिद्धि रूप अपना शुद्ध सत्त्वगुण धारण कर, विष्वक्सेन आदि पार्षदों से वेष्टित तथा श्रेष्ठ आयुधों से शोभित भुजदंडों से शोभायमान हो रहे हैं।)

अथर्ववेद के काण्ड 18 में भी 4 बड़े सूक्त हैं, जिनको पितृमेध-सूक्त कहा गया है। इनमें कुल 283 मन्त्र हैं। इन मन्त्रों में यम-मार्ग के दो श्वान (कुत्ते) कहे गये हैं, जो सम्भवतः मंगल के दो उपग्रह हैं।[2]

शनि के चारों तरफ के वलयों को 3 भागों में बाँटा गया है– भीतर का पीलुमती, मध्य में उदन्वती तथा बाहरी प्रद्यौ (Paradise) हैं–

उदन्वती द्यौरवमा पीलुमतीति मध्यमा।
तृतीया ह प्रद्यौरिति यस्यां पितर आसते॥[3]

अर्थात् सबसे नीचे जिसमें जल (मेघमण्डल) स्थित है वह 'उदन्वती' है, उससे ऊपर 'पीलुमती' है जिसमें ग्रह-नक्षत्र आदि स्थित हैं। इससे ऊपर तीसरा द्युलोक 'प्रद्यौः' कहलाता है, जहाँ पितर रहते हैं।

सम्भवतः इसी 'उदन्वती' को गरुड़-पुराण में वैतरणी नदी कहा है। जगत् की आत्मा विष्णु का वाहन गरुड़ है, अतः उनके स्वरूप आत्मा का वाहन भी गरुड़ ही होगा, अतः इस पुराण को गरुड़-पुराण कहते हैं।

विष्णु रूप सूर्य के चार पद

1 भागवत पुराण : 5.20.34-40.
2 ऋग्वेद 10.14.10-11, अथर्व वेद 18.2.11-12
3 अथर्व 18.2.48)।

आकाश में विष्णु रूप सूर्य के 4 पद हैं। इनमें 3 पद सौर मण्डल में हैं।

1. **ताप क्षेत्र** 100 योजन (यहाँ सूर्य व्यास= 1 योजन) तक,
2. उसके बाद **तेज या वायु क्षेत्र** 1000 योजन तक (पुरुष सूक्त की भाषा में सहस्राक्ष, सूर्य= अक्ष या चक्षु) तथा
3. एक लाख योजन तक **प्रकाश क्षेत्र** जहाँ तक तीव्र प्रकाश है।

सूर्य का प्रकाश आकाशगंगा से जहाँ तक अधिक है, उसे सौरमण्डल का 'द्यु' कहा है। यह 157 लाख सूर्य वास तक या पृथ्वी के आकार को 30 बार 2-गुणा करने पर (30 धाम) होता है।

इन तीन पदों का उल्लेख इस प्रकार हुआ है–

"शत योजने ह वा एष (आदित्य) इतस्तपति"[4]

"स एष (आदित्यः) एकशतविधस्तस्य रश्मयः।
शतविधा एष एवैक शततमो य एष तपति"।।[5]

"युक्ता ह्यस्य (इन्द्रस्य) हरयः शतादशेति।
सहस्रं हैत आदित्यस्य रश्मयः" (इन्द्रः=आदित्यः)।।[6]

"असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः।
ये चैनं रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रोऽवैषां हेड ईमहे"।।[7]

"भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम्"।5।।[8]

"योजनानां सहस्राणि भास्करस्य रथो नव।
ईषादण्डस्तथैवास्य द्विगुणो मुनिसत्तम।।2।।
सार्धकोटिस्तथा सप्त नियुतान्यधिकानि वै।
योजनानां तु तस्याक्षस्तत्र चक्रं प्रतिष्ठितम्"।।3।।[9]

सूर्यसिद्धान्त भी इसी पौराणिक अवधारणा का उल्लेख करता है–

"भवेद् भकक्षा तिग्मांशोर्भ्रमणं षष्टिताडितम्।
सर्वोपरिष्टाद् भ्रमति योजनैस्तैर्भमण्डलम् ।।80।।"[10]

"इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूळहमस्य पांसुरे।।17।।"

"तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।
दिवीव चक्षुराततम्।।20।।"

सूर्य का चतुर्थ पद

सूर्य का चतुर्थ या परम पद वह क्षेत्र है, जिसकी सीमा पर सूर्य विन्दु मात्र दीखता है–

ख-व्योम-खत्रय-ख-सागर-षट्क-नाग-
व्योमा-ष्ट-शून्य-यम-रूप-नगा-ष्ट-चन्द्राः।
ब्रह्माण्डसंपुटपरिभ्रमणं समन्ता-
दभ्यन्तरा दिनकरस्य करप्रसाराः।।90।।[11]

त्रिंशद्धाम वि-राजति वाक् पतङ्गाय धीमहि।
प्रति वस्तोरहद्युभिः।।[12]

...द्वात्रिंशतं वै देवरथाहन्यन्ययं लोकस्तं समन्तं पृथिवी द्विस्तावत्पर्येति तां समन्तं पृथिवीं द्विस्तावत्समुद्रः पर्येति.....[13]

4 कौषीतकि ब्राह्मण उपनिषद् 8.3
5 शतपथ ब्राह्मण 10.2.4.3
6 जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण 1.44.5
7 वाजसनेयि यजुर्वेद संहिता : 16.6
8 विष्णु पुराण 2.7
9 विष्णु पुराण 2.8
10 सूर्य सिद्धान्त : 12.
11 सूर्य सिद्धान्त12-
12 ऋक्, 10.189.3
13 बृहदारण्यक उपनिषद् 3.3.2

मृत पितर के जीव को :

1. पृथ्वी की कक्षा से चन्द्रमण्डल की कक्षा तक पहुँचाने के लिए- प्रेतश्राद्ध एक वर्ष की अवधि तक। (सपिण्डीकरण पर्यन्त)
2. चन्द्र की कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा में स्थापित करने हेतु- पितृपक्ष श्राद्ध
3. उससे ऊपर अवान्तर ग्रह एवं शनि के वलयों को पार करने के लिए वार्षिक एकोद्दिष्ट श्राद्ध
4. सौरमण्डल से बाहर निकलने के लिए - गयाश्राद्ध

प्रेत की चार गतियाँ

विष्णु के 4 पदों के अनुसार प्रेत (प्र इतः= यहाँ से चला गया) की 4 गतियाँ हैं- (0) प्रेत शरीर– चन्द्र की 10 परिक्रमा (273 दिन) में मनुष्य शरीर गर्भ में बनता है। प्रेत शरीर चान्द्र मण्डल का पदार्थ है, यह पृथ्वी की 10 परिभ्रमण (10 दिन में बनता है। इसी प्रकार सौरमण्डल की सृष्टि भी परमेष्ठी मण्डल की 10 परिक्रमा में हुयी है, जिसे 10 रात्रि कहा है।

यज्ञो वै दश होता।[14]

विराट् वा एषा समृद्धा, यद् दशाहानि।[15]

विराट् वै यज्ञः। ...दशाक्षरा वै विराट्।[16]

अन्तो वा एष यज्ञस्य यद् दशममहः।[17]

अथ यद् दशरात्रमुपयन्ति। विश्वानेव देवान्देवतां यजन्ते।[18]

प्राणा वै दशवीराः।[19]

पितरों का निवास एवं उसका काल

(1) पृथ्वी सतह से चन्द्रकक्षा तक चन्द्र की 13 परिक्रमा अर्थात् 12 चान्द्रमास में। उसके बाद चन्द्र के ऊर्ध्व भाग में पितर निवास।

(2) चन्द्र सतह पर पृथ्वी कक्षा के साथ सूर्य की वार्षिक परिक्रमा, जिसके लिये पितृपक्ष में श्राद्ध।

(3) गौ (प्रकाश किरण) की शक्ति से महान् आत्मा का सौरमण्डल की सीमा तक गति-मार्ग में अवान्तर ग्रह तथा शनि के वलयों की बाधा।

सौरमण्डल से बाहर निकलने के लिए गयाश्राद्ध

(4) सौर मण्डल से बाहर निकलना जिसके लिये गयाश्राद्ध–

द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमण्डलभेदिनौ।
परिव्राट् योगयुक्तो वा रणे चाभिमुखं हतम्॥[20]

ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोको यत्र ते कल्पवासिनः।
एक योजन कोटिस्तु यत्र ते कल्पवासिनः॥12॥[21]

14 (तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.2.1.6) 15 (ताण्ड्य महाब्राह्मण 4.8.6)

16 (शतपथ ब्राह्मण 1.1.1.22, 2.3.1.18, 4.4.5.19) 17 तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.2.6.1)

18 शतपथ ब्राह्मण 12.1.3.17 19 यजु 19.48, शतपथ ब्राह्मण 12.8.1.22

20 विदुर गीता, शुक्र नीति 21 विष्णु पुराण 2.7-

स यदाह गयोऽसीति सोमं वा एतदाहैष ह वै चन्द्रमा भूत्वा सर्वाँल्लोकान् गच्छति तद् यद् गच्छति तस्माद् गयः, तद् गयस्य गयत्वम्।[22]

प्राणा वै गयाः।[23]

गयस्फानः प्रतरणः सुवीरो ऽवीरहा प्र चरा सोम दुर्यान्।[24]

गयस्फानः प्रतरणः सुवीर इति गवां नः स्फावयिता प्रतारयितैधीत्याह।[25]

यम के चार अर्थ

(1) सृष्टि का आरम्भ एकर्षि से हुआ जो 3 भाग में विभक्त नहीं होने के कारण **'अत्रि'** कहा गया है। यह सूर्य (स्रोत) तथा यम (परिणति) के बीच ऋषि (रस्सी) है, जिसके द्वारा पोषण (पूषन्) होता है। यह प्राजापत्य (सृष्टि करने वाला) है–

पूषन् एकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूहरश्मीन् समूह। तेजो यत् ते रूपं तत् ते पश्यामि योसावसौ सोऽहमस्मि।[26]

(अर्थात् हे जगत् के पोषक सूर्य, एकाकी गमन करने वाले, हे यम, हे सूर्य हे प्रजापति के पुत्र, अपनी किरणों को हटा लें। तुम्हारे अतिशय कल्याणमय स्वरूप को मैं देख रहा हूँ। यह जो आदित्यमण्डलस्थ पुरुष है, वह मैं हूँ।)

(2) **सौर वायु की सीमा पर यूरेनस ग्रह तक**– शनि धर्म तथा यूरेनस यम है। पिता का सक्रिय जीवन समाप्त होने पर पुत्र का आरम्भ होता है अतः सीमावर्त्ती भाग पुत्र है। पार्थिव (ठोस) ग्रहों की सीमा पर मंगल भी इसी अर्थ में पृथ्वी का पुत्र है।

यम की नगरी संयमनी

विष्णु-पुराण के अनुसार इस मानसोत्तर पर्वत के दक्षिण में यम की संयमनी नाम की नगरी है। यह यमकोटि स्थान में अवस्थित है। सूर्यसिद्धान्त भी इस अवधारणा की पुष्टि करता है।

(3) **पृथ्वी पर 2 यम क्षेत्र हैं**– सबसे दक्षिणी भाग अनन्त द्वीप (अण्टार्कटिका) है क्योंकि यह नक्शे में अनन्त आकार का हो जायेगा। यह 2 भूखण्ड है अतः यम (यमल= जोड़ा, 2) है। इसका निकटवर्त्ती भाग न्यूजीलैण्ड यमकोटिद्वीप भी 2 भूखण्ड है। इसका दक्षिणी पश्चिमी तट यमकोटिपत्तन उज्जैन या लंका से 90 अंश पूर्व कहा गया है (सूर्य सिद्धान्त)। भारत की पश्चिमी सीमा भी यम क्षेत्र है। यहां यम और संयमनी के नाम पर कई स्थान हैं– यमन, अम्मान, सना तथा मृतसागर। इसके 90 अंश पूर्व (वियतनाम) में इन्द्र की अमरावती पुरी थी जिनको पूर्व का दिक्पाल कहा है।

दक्षिण दिशा में यम की नगरी

विष्णु-पुराण के अनुसार चारों दिशाओं में चार दिक्पालों की नगरियाँ हैं–

22 गोपथ ब्राह्मण, पूर्व 5.14 23 शतपथ ब्राह्मण 14.8.15.7 24 ऋक् 1.91.19
25 ऐतरेय ब्राह्मण 1.13 26 ईशावास्य उपनिषद्, 16

मानसोत्तरशैलस्य पूर्वतो वासवी पुरी।
दक्षिणे तु यमस्यान्या प्रतीच्यां वारुणस्य च।
उत्तरेण च सोमस्य तासां नामानि मे शृणु॥8॥
वस्वौकसारा शक्रस्य याम्या संयमनी तथा।
पुरी सुखा जलेशस्य सोमस्य च विभावरी।9।

अर्थात् इस मानसोत्तर पर्वत के पूर्व में इन्द्र की नगरी है, दक्षिण में यम की, पञ्चिम में वरुण की और उत्तर में चन्द्रमा की है। उन नगरियों के नाम सुनो– इन्द्र की पुरी वस्वौकसारा है, यम की संयमनी, वरुण की सुखा है तथा चन्द्रमा की विभावरी है।।

शक्रादीनां पुरे तिष्ठन् स्पृशत्येष पुरत्रयम्।
विकोणौ द्वौ विकोणस्थस्त्रीन् कोणान्द्वे पुरे तथा॥16॥
उदितो वर्द्धमानाभिरामध्याह्नात्तपन् रविः।
ततः परं ह्रसन्तीभिर्गोभिरस्तं नियच्छति॥17॥[27]

(अर्थात् मध्याह्न काल में इन्द्रादि में से किसी एक दिक्पाल की नगरी पर प्रकाशित होते हए सूर्य (पार्श्ववर्ती दो नगरियों के साथ) तीन नगरियों और दो कोणों को प्रकाशित करते हैं, इसी प्रकार अग्नि आदि कोणों में से किसी एक कोण में प्रकाशित होते हुए वे (पार्श्ववर्ती दो कोणों के साथ) तीन कोण और दो पुरियों को प्रकाशित करते हैं। सूयदेव उदय होने के अनन्तर मध्याह्न पर्यन्त अपनी बदलती हुई किरणों से तपते हैं और फिर क्षीण होती हुई किरणोंसे अस्त हो जाते हैं।)

यम की नगरी यमकोटि तथा अन्य नगरियों के विस्तार पर सूर्यसिद्धान्त में विवरण है कि

भूवृत्तपादे पूर्वस्यां यमकोटीति विश्रुता।
भद्राश्ववर्षे नगरी स्वर्णप्राकारतोरणा॥38॥
याम्यायां भारते वर्षे लङ्का तद्वन् महापुरी।
पश्चिमे केतुमालाख्ये रोमकाख्या प्रकीर्तिता॥39॥
उदक् सिद्धपुरी नाम कुरुवर्षे प्रकीर्तिता (40)
भूवृत्तपादविवरास्ताश्चान्योन्यं प्रतिष्ठिता (41)
तासामुपरिगो याति विषुवस्थो दिवाकरः।
न तासु विषुवच्छाया नाक्षस्योन्नतिरिष्यते ॥42॥[28]

अर्थात् पृथ्वी की परिधि 5059 योजन के चतुर्थांश की दूरी पर पूर्व दिशा में भद्राश्व वर्ष है। उसी में यमकोटि नामक पुरी है। यह सोने की दीवाल से बनी तथा तोरणों से घिरी है। इतनी ही दूरी पर दक्षिण दिशा में भारतवर्ष है। उसके बीच में लंका नामक महापुरी है। इतनी ही दूरी पर पश्चिम में केतुमाल वर्ष है, जहाँ रोमक नामक नगरी है। उत्तर भाग में कुरुवर्ष में सिद्धपुरी नगरी है वहाँ सिद्ध महात्मा लोग कष्टरहित होकर सुखपूर्वक निवास करते हैं। पूर्वोक्त सारी नगरियाँ पृथ्वी की परिधि के चौथे भाग यानी लगभग 1265 योजन की दूरी पर उत्तर मेरु है जहाँ के निवासियों को देव कहा जाता है। इन नगरियों के ऊपर जब सूर्य दिखाई पड़ता है वही विषुवत् वृत्त है। जब सूर्य विषुवत् वृत्त पर रहते हैं तो वहाँ विषुवच्छाया (पलभा) और अक्षोन्नति (अक्षध्रुव) नहीं होती है।

(4) मनुष्य रूप में– विवस्वान्– वायु-पुराण वर्णन के अनुसार 13902 ई.पू. में थे। इसके पूर्व वेद का ब्रह्म सम्प्रदाय स्वायम्भुव मनु (29102 ई.पू.) से था। ज्योतिष में भी पहले पितामह सिद्धान्त था, विवस्वान् से सूर्य सिद्धान्त आरम्भ हुआ जिसका संशोधन मय असुर ने 9232 ई.पू. में किया। विवस्वान के पुत्र वैवस्वत मनु थे, जिनके वंशज (पुत्र) इक्ष्वाकु का शासन 1-11-8576 ई.पू. में आरम्भ हुआ। विवस्वान की परम्परा में ही (दूसरे पुत्र) वैवस्वत यम हुये, जिनके काल में जल-प्रलय हुआ था (प्रायः 10,000 ई.पू.)। इनको जेन्द अवेस्ता में जमशेद कहा गया है

***

27 विष्णु पुराण (2.8

28 सूर्य सिद्धान्त (12.38-42)-

'प्रेत' शब्द का विमर्श तथा 'यमगीता'

डॉ. सुदर्शन श्रीनिवास शाण्डिल्य
व्याकरणाध्यापक, श्रीराम संस्कृत महाविद्यालय, सरौती, अरवल। पटना आवास- ज्योतिषभवन, शिवनगर कालोनी, मार्गसंख्या 10, बेऊर जेल के पीछे, पटना।

आज 'प्रेत' शब्द को लेकर सर्वाधिक भ्रान्ति फैलायी गयी है। प्राचीन शास्त्रीय ग्रन्थों तथा कोष में प्रयोग के आधार पर प्रेत शब्द के दो अर्थ होते हैं– 1. सद्यः मृत व्यक्ति तथा 2. प्रेतयोनि में उत्पन्न। सद्यःमृत व्यक्ति के रूप में 'प्रेत' शब्द एक विशेष अवस्था का नाम है, जिसका प्रयोग 'पितर' से अलग करने हेतु किया गया है। इस अवस्था से सभी लोगों को गुजरना पड़ता है, क्योंकि मृत्यु सत्य है। लेकिन प्रेतयोनि में वे लोग ही जाते हैं, जो अपने जीवन में जघन्य पाप कर चुके होते हैं, उन्हें दण्डस्वरूप वह योनि मिलती है। भूमि और कन्या के अहरणकर्ता को प्रेत योनि में जन्म लेना पड़ता है। इस प्रकार के अन्य अनेक पापकर्म गिनाये गये हैं। लेखक का मानना है कि ये सारे वर्णन हमें पापकर्मों से विमुख कर अच्छे कर्म हेतु प्रेरित करने के लिए पौराणिक शैली के उपदेश हैं। इसी क्रम में भगवद्भक्ति के लिए भी प्ररोचना लिखी गयी हैं। और प्ररोचना को वास्तविक समझ लेना भ्रम है।

वैदिक ज्ञान-परम्परा के परिप्रेक्ष्य में जड-चेतन प्रपञ्चात्मक जगत् का विश्लेषण रहस्यमय है। चार्वाक को छोड़कर सभी भारतीय मत पुनर्जन्म को मानता रहा है। गमनागमन चक्र से संयुक्त होकर शाश्वत, शक्तिधाम, परमधाम, परब्रह्म, परमानन्द की प्राप्ति ही मानव जीवन का यथार्थ उद्देश्य है। एतदर्थ शुभ-अशुभ कर्मों का स्वरूप तथा तत्फल प्राप्ति का विशद वर्णन हुआ है।

मानव जीवन को सर्वविध मंगलमय बनाने के लिए षोडश संस्कारों का प्रावधान है। उसी में मरणान्तर श्राद्ध -संस्कार का सम्पादन होता है। जिसके विधि सम्पादन में मृत व्यक्ति को 'प्रेत' शब्द से अभिहित किया जाता है।

अज्ञानतावश एक पृथक् सामाजिक अवधारणा में 'प्रेत' शब्द अशुभ, भयानक प्राणी का वाचक माना जाता रहा है, जो नितान्त अनुचित है। तत्सम अर्थात् संस्कृत शब्दों का अर्थनिर्धारण व्याकरण शास्त्र के आधार पर होता है तथा उसका प्रयोग कोष से निर्धारित होता है। अमरकोष द्वितीय काण्ड, क्षत्रिय वर्ग, कारिका 116 के अनुसार मृत शब्द के सात पर्याय शब्दों में एक 'प्रेत' है। सुधा रामाश्रमी व्याख्याकार के अनुसार **प्रकर्षेण इतः इति प्रेतः।**

किसी व्यक्ति के शरीरत्यागान्तराव्यवहितोत्तर-क्षणप्राप्यानन्तरावस्था यानी शरीर के त्याग के तुरत बाद के क्षण में जिस दूसरी अवस्था की प्राप्ति हुई है,

"अतः यमदेव सर्वथा पूज्य लोकहितैषी अनुशासित तथा अनुशासक देव हैं। इन्हें भयावह मानना बौद्धिक दुरपराध है। मरणोपरान्त इनके द्वारा फल निर्धारण क्रिया से ही प्राण्यन्तर स्वरूप गति-अगति का बोध सम्भव है।"

उसका नाम 'प्रेत' है। यह अज्ञात एवं अदृश्य है, यही उसकी प्रकृष्टता है।

पुनः अमरकोष, तृतीयकाण्ड, नानार्थवर्ग जिसमें एक शब्द के अनेक अर्थ दिये गये हैं, इसके अनुसार– **प्रेतः प्राण्यन्तरे मृते** अर्थात् 'प्रेत' शब्द भिन्न प्राणी का वाचक है। इससे कहीं से भी अशुभ, दुःखद, भयावह अर्थ का संचार मानसिक विडम्बना है।

पद्मपुराण सृष्टिखण्ड, 32.51 के अनुसार

ब्रह्महा गोघ्नकश्चैव सुरापो गुरुतल्पगः।
भूमिकन्यापहर्ता च स प्रेतो जायते नरः।।

अर्थात् ब्राह्मण का हत्यारा, गाय का हत्यारा, मदिरा पीने वाला, गुरुपत्नी के साथ भोग करने वाला भूमि तथा कन्या का अपहरण करने वाले व्यक्ति को प्रेत कहा गया है। यह अशुभभाववृत्तिशामक सांकेतितार्थ है। अभिधार्थ के समक्ष सभी अर्थ गौण हो जाते हैं। सूक्ष्मात्मा को किस रूप में किस तरह से किस कुकर्म का दण्ड मिलता है, यह पूर्ण अज्ञात, अदृश्य तथा अदृश्यलोक का विषय है।

अतः तर्कसम्मत है कि 'प्रेत' शब्द प्राण्यन्तरवाची है। ऐसा मानने से ही वैदिक श्राद्ध पद्धति का नियमन हो पाता है। सपिण्डीकरण से पूर्व तक ही मृत प्राणी के संबोधन में 'प्रेत' शब्द का उच्चारण होता है। पूर्व में संकल्प में 'प्रेतत्वविमुक्तिकाम' सर्वत्र उच्चारित होता है। मृत प्राणी के पूर्व तीन पीढ़ी पिता, पितामह तथा प्रपितामह इनके पिण्ड के साथ मृत प्राणी के पिण्ड सम्मेलन के पश्चात् प्रेत संबोधन असिद्ध हो जाता है। पितृलोकवासी मृत प्राणी हो जाता है। वहाँ का स्वरूप अज्ञात है। इस स्थूल चक्षु से अदृश्य है अतः प्राण्यन्तर वाची ही 'प्रेत' शब्द समुचित सिद्ध होता है।

यहाँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विचारणीय विषय यह है कि जगज्जीवन के अनन्तकर्मों के फलस्वरूप फल निर्धारण की प्रक्रिया का बोध आवश्यक है। तदर्थ गीता, 10.29 में **"यमः संयमतामहम्"** के अनुसार मर्त्यलोक तथा देवलोक में अनेक नियमन अधिकारियों में यमराज विशेष ज्ञानी, अनुशासित एवं सर्वदण्ड, धर्म के ज्ञाता हैं; जगत् हितैषी हैं, पापनाशक हैं।

सर्वाधिक विशिष्ट गुण इनका है कि भगवान् के परमप्रिय ज्ञानी भक्त तथा लोकपाल हैं। इनके लिए भगवद्भक्त तथा भगवदाज्ञा सर्वोपरि है। इसीलिए भगवान् श्रीकृष्ण ने अपना स्वरूप बतलाया है– "यमः संयमतामहम्।"

यमराज का विशिष्ट शुभ स्वरूप का वर्णन विभिन्न पुराणों तथा उपनिषदों में मिलता है। जैसे स्कन्द पुराण, वाराह पुराण, विष्णु पुराण तथा कठोपनिषद् में विशेष यम भगवान् का भगवदनुकूल स्वरूप वर्णित है। कठोपनिषद् का तो यम-नचिकेता संवाद विश्व साहित्य में विख्यात है। अतः यमदेव सर्वथा पूज्य लोकहितैषी अनुशासित तथा अनुशासक देव हैं। इन्हें भयावह मानना बौद्धिक दुरपराध है। मरणोपरान्त इनके द्वारा फल निर्धारण क्रिया से ही प्राण्यन्तर स्वरूप गति-अगति का बोध सम्भव है।

विष्णुपुराण निश्चित रूप से प्राचीन एवं अति प्रतिष्ठित पुराण है, जिसमें विगत एक सहस्राब्दी से कोई प्रक्षेप नहीं हुआ है। अतः इसकी प्रामाणिकता बढ़ जाती

है। इसमें कर्मफल के निर्धारण का प्रसंग द्रष्टव्य है। इसके तृतीय अंश के सातवें अध्याय में यमगीता शीर्षक से एक स्थल है। इसमें स्पष्ट है कि यम भगवान् सूर्य के पुत्र हैं।

विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा से सूर्य का प्रथम विवाह हुआ है, जिससे मनु, यम एवं यमी ये तीन सन्तान हैं। संज्ञा भगवान् सूर्य के तीव्र तेज को सहन नहीं कर सकीं, अतः भगवान् सूर्य की सेवा में छाया को नियुक्त कर स्वयं तपस्यारत हो चुकी है। तदनन्तर छाया से शनैश्चर, सावर्णि मनु तथा तपती ये तीन सन्तान हुई।

"पुराणों में यमराज की छवि नियामक के रूप में है। जहाँ कहीं भी उनके साम्राज्य की चर्चा की गयी है, वहाँ पुराणकारों का उद्देश्य है कि मनुष्य उनकी यातनाओं का स्मरण कर कुकर्मों का त्याग करे, सुकर्म करे तथा देवता के प्रति आस्था और विश्वास के साथ इस संसार में धर्माचरण करते हुए अन्त में भी प्रभुस्मरण कर सद्गति प्राप्त करे।"

इसकी विशद कथा विष्णुपुराण में बड़ी रोचक, मनोरम तथा ज्ञातव्य है। यमदेव को जब मर्त्यलोक तथा देवलोक को नियन्त्रित करने का अधिकार भगवान् से मिला तब इन्होंने अपने यमदूतों से इसका पर्याप्त ज्ञान दिया है। जिसे कलिङ्ग नामक ब्राह्मण ने सुना था। मैत्रेय अपने गुरु से पूछते हैं–

सोऽहमिच्छामि तच्छ्रोतुं यमस्य वशवर्तिनः ।
न भवन्ति नरा येन तत्कर्म कथयामलम्॥7॥

किन कर्मों से प्राणी यमराज के दण्ड का भागी नहीं होता, उन्हें में सुनना चाहता हूँ, आप विस्तार से कहें।

इसी कथा की धारा में यमदेव के श्रुत वचनों को कलिङ्ग नामक ब्राह्मण से कहलाया गया है। आगे कलिङ्ग की उक्ति है–

स्वपुरुषमभिवीक्ष्य पाशहस्तं
वदति यमः किल तस्य कर्णमूले ।
परिहर मधुसूदनं प्रपन्नान्
प्रभुरहमस्मि नृणां न वैष्णवानाम् ॥14 ॥

अपने हाथ में पाश लिए हुए अनुचरों से यमराज ने कान में कहा है कि भगवान् मधुसूदन के शरणागत प्राणियों को छोड़ देना, क्योंकि भगवद्भक्त वैष्णवों के अतिरिक्त अन्य प्राणियों का ही मैं स्वामी हूँ।

यहाँ पर परब्रह्म के व्यापक स्वरूप को समझना चाहिए। अर्थात् पञ्चब्रह्मोपासक यमराज के अधान नहीं हैं। ये स्वेष्टदेव के अधीन होते हैं। इसी प्रकार श्लोक संख्या 14 से 35 तक विशद रूप से सुकर्म तथा कुकर्म का वर्णन आया है। यहाँ पर इनके वर्णन का एकमात्र उद्देश्य है कि लोग कुकर्म का त्याग कर सुकर्म की ओर प्रवृत्त हों तथा भगवद्भक्ति करें। यहाँ विचारणीय है कि भगवद्भक्तों के मरणोपरान्त गति का निर्धारण पूर्णरूप से प्रभुकृपा के अधीन है। प्रभु की कृपा, क्षमा विलक्षण अनुपम तथा अद्वितीय है। वे सर्वतन्त्रस्वतन्त्र हैं। उनका निर्धारण अन्तिम तथा अपरिवर्तनीय है। जीव की अनन्तकर्मावच्छिन्नता में से कौन से कर्म कृपा का संचारक हो, यह प्रभु ही जानते हैं।

गीता में भी यही बात आयी है–

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्रयत्र शंसयः।।

–गीता : 8.5.

यहाँ पर 'च' अव्यय का प्रयोग 'अपि' अर्थ में हुआ है। सामान्यतः यहाँ च का अन्वय अन्तकाले से करने पर अर्थ होगा कि जीवन पर्यन्त तो मेरा स्मरण करना ही चाहिए साथ साथ अन्तकाल में मेरा ही स्मरण करना चाहिए। किन्तु यहाँ च का विशिष्ट अर्थ है, जब हम इसका अन्वय **'कलेवरम् च मुक्त्वा'** के साथ करते हैं। इस अन्वय से तात्पर्य है कि जो मेरा अहर्निश चिन्तन, स्मरण, भजन करते हैं उनका मेरे साथ नित्य सम्बन्ध होने से मेरी प्राप्ति में कहीं सन्देह नहीं है। परन्तु

जो मनुष्य पूर्व में पापकर्म निरत होते हुए भी अन्तिम क्षण में प्राणवियोग के क्षण में **मामेव** अर्थात् सम्पूर्ण सांसारिक सम्बन्धों का परित्याग कर मात्र मेरा आश्रय विश्वास से सद्गति चाहता है, वह निश्चित ही मुझे ही प्राप्त करता है।

अतः इस परिप्रेक्ष्य में मरणोपरान्त गति का निर्धारण करुणाकर कृपाकूपापार श्रीकृष्ण के हाथों में है। अतः किसी के देह त्यागानन्तर शुभ अशुभ स्वरूप का निर्धारण जीवज्ञान अशक्य असम्भव है। अतः 'प्रेत' शब्द पूर्ण रूप से प्राण्यन्तरावस्था है।

बाली जीवन भर छोटे भाई की पत्नी को पत्नी बनाकर रखा जिसके कारण से उसके वध को भगवान् राम के द्वारा उचित सिद्ध किया गया है। पर अन्त-अन्त में बाली की पूर्ण प्रभुरति हो गयी है। यह अंतिम क्षण वाली की मुक्ति का कारण बना।

आदि शंकराचार्य ने भी प्रसिद्ध स्तोत्र चर्पटपञ्जरिका में कहा है कि गीता का अध्ययन करने वाले, गंगाजल की एक बूँद भी पीने वाले और मुरारि की अर्चना करने वाले की चर्चा यमराज नहीं करते हैं।

भगवद्गीता किञ्चिदधीता
गङ्गाजललवकणिका पीता।
सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा
तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम्।।

इस प्रकार, पुराणों में यमराज की छवि नियामक के रूप में है। जहाँ कहीं भी उनके साम्राज्य की चर्चा की गयी है, वहाँ पुराणकारों का उद्देश्य है कि मनुष्य उनकी यातनाओं का स्मरण कर कुकर्मों का त्याग करे, सुकर्म करे तथा देवता के प्रति आस्था और विश्वास के साथ इस संसार में धर्माचरण करते हुए अन्त में भी प्रभुस्मरण कर सद्गति प्राप्त करे।

***

कविता

मृत्यु से परब्रह्म की ओर

–डॉ. विनोद कुमार जोशी
वाराणसी

मृत्यु अवश्यम्भावी है।
वह तो गोद है, जगत-जननी की,
पुनर्जन्म-प्रदायिनी
अग्रसर हो मन!
मृत्यु से अमरत्व की ओर,
जगत् मन से ही सृजित है।
नियमन मन का।
सम्भव है आत्मस्थित हो
आत्मा अंश है परमात्मा का।।
अखण्ड अव्यक्त अनन्त,
आदि, अनादि व्यक्त,
परब्रह्म एक।।

***

आत्मतत्त्व के उपदेशक यमराज

डॉ. कवीन्द्र नारायण श्रीवास्तव
पूर्व न्यूज़ एडिटर, प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया (पी टी आई) ,
नई दिल्ली। मोबाइल 6307037057

यमराज को मृत्यु का देवता मान गया है। यह उपनिषत्-कालीन अवधारणा है। इसलिए कठोपनिषद् में 'मृत्यवे त्वां ददामीति' ऐसा पिता के मुख से वचन सुनकर नचिकेता यमलोक चले जाते हैं। यम-और नचिकेता की कथा प्रायशः सबसे प्रसिद्ध औपनिषदिक कथा है। इस कथा में आगे हम यम का स्वरूप देकते हैं तो उन्हें एक सद्गृहस्थ, महाज्ञानी तथा आत्मतत्त्व के उपदेष्टा गुरु के रूप में हम उहें पाते हैं। उन्होंने शिष्य नचिकेता को जो उपदेश किया है, वह आत्मतत्त्व विमर्श का आधार बना हुआ है। इस आलेख में लेखक ने यमराज के इसी गुरु के रूप में चरित-चित्रण प्रस्तुत किया है।

कठोपनिषद् में यमराज के द्वारा नचिकेता को दिये गये उपदेश आत्मा और जीव के सम्बन्ध पर भारतीय चिन्तन का आधार बना

मृत्यु के देवता यम और उनके लोक के बारे में आम तौर पर वर्तमान समाज में बहुत ही डरावना और वीभत्स स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है लेकिन जैसा स्वरूप हमारे दिलो दिमाग में बैठ गया है, वह वास्तविकता से काफी परे है। हम यदि अपने पुराणों और उपनिषदों को देखें तो किसी भी स्थान पर यम और यमलोक के बारे में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसको लेकर हमारे अंदर ऐसा भय का वातावरण बने। यदि हम देखें तो यम के बारे में सबसे सटीक और सत्य आधारित वर्णन कठोपनिषद् में उल्लेखित है। बहुत ही सूक्ष्मता से अध्ययन करने पर यम और उनकी पत्नी एक बहुत ही समृद्ध और गौरवशाली गृहस्थ के रूप में हमें दिखाई देते हैं।

उद्दालक ऋषि के पुत्र नचिकेता जब अपने पिता के रोषपूर्ण ही सही लेकिन उनकी इच्छा को पूरा करने के लिए यमलोक में पहुँचते हैं और वहाँ यम की तीन दिनों तक प्रतीक्षा करते हैं तो उन्हें न तो वहाँ कोई वीभत्स स्वरूप दिखाई देता है और न ही कोई भय का वातावरण। बल्कि यम जब तीन दिनों के बाद कहीं से लौटते हैं तो उनकी पत्नी बड़े ही आदर भाव से उन्हें बताती हैं कि एक छोटा ब्राह्मण बालक आपकी तीन दिनों से प्रतीक्षा कर रहा है।

वैश्वानरः प्रविशत्यतिथिर्ब्राह्मणो गृहान्।[1]

स्वयम् अग्नि देवता ही ब्राह्मण अतिथि रूप में घरों में प्रवेश करते हैं।

यम की पत्नी का यह कहना ही कितना कर्ण प्रिय लगता है कि कोई अति समृद्ध और गौरवशाली स्त्री अपने पति को अतिथि के आने का समाचार बता रही है। इसके आगे वह अपने पति को कहती हैं कि जिसके घर पर ब्राह्मण अतिथि भूखा रहता है उसके पूर्व पुण्य से प्राप्त पुत्र और पशु आदि धन को नष्ट कर देता है।

इसके बाद यम की शालीनता देखिये। वह कहते है– ब्रह्मन् नमस्यः अतिथिः। हे ब्राह्मण देवता आप नमस्कार करने योग्य अतिथि हैं। ते नमः अस्तु। आपको नमस्कार हो। और वह अनजाने में ही अपने द्वारा किये गए कथित अपराध के लिए क्षमा माँगते हैं। वह पुनः कहते हैं–

नमस्ते अस्तु ब्रह्मन् स्वस्ति मे अस्तु
तस्मात् प्रति त्रीन् वरान् वृणीष्व।[2]

मेरा कल्याण हो ,आप प्रत्येक रात्रि के बदले तीन वरदान माँग लीजिये।

विचार किया जा सकता है कि एक समृद्ध गृहस्थ संत ही इस तरह की बात कह सकता है। यह यम के सौम्य रूप का एक शाश्वत उदाहरण है। इसके पश्चात् नचिकेता सहर्ष तीन वरदान माँग लेते हैं। जिसमें प्रमुख रूप से इस लोक के लिए पिता की संतुष्टि का वर, परलोक के लिए स्वर्ग के साधन रूप अग्नि विज्ञान का वर और तीसरे वर के रूप में आत्मतत्व के ज्ञान का वर शामिल है। प्रथम दो वर प्रदान करने में तो यम को कोई हिचक नहीं हुआ लेकिन नचिकेता की अवस्था और आत्मतत्त्व की कठिनता के चलते यम ने नचिकेता से कोई और वर माँगने का आग्रह किया लेकिन नचिकेता ने स्पष्ट रूप से कह दिया :

देवैरत्रापि विचिकित्सितं किल
त्वं च मृत्यो यन्न सुविज्ञेयमात्थ।
वक्ता चास्य त्वादृगन्यो न लभ्यो
नान्यो वरस्तुल्य एतस्य कश्चित्।।[3]

हे यमराज! आपने जो यह कहा कि सचमुच इस विषय पर देवताओं ने भी विचार किया था और वह सुविज्ञेय भी नहीं है, तो इसके सिवा इस विषय का कहने वाला भी आपके जैसा दूसरा नहीं मिल सकता इसलिए मेरी समझ में तो इसके समान दूसरा कोई भी वर नहीं है।

> “नचिकेता और यम के बीच आगे और हुए वार्तालाप के आधार पर तो वे एक दिक्पाल देवता, सौम्य देवता, सरल देवता, निर्मल मन देवता, किसी का भी अहित न चाहने वाले देवता के साथ साथ आत्म तत्व के मर्मज्ञ देवता के रूप में प्रतिष्ठापित होते हैं।”

इस वार्तालाप से यम का स्वरूप इतना सौम्य और बौद्धिक रूप से समृद्ध होकर सामने आता है कि उनके बारे में सारी भ्रांतियां ही खत्म होने को मजबूर हो जाती हैं। नचिकेता जहाँ एक ओर यम को अन्य देवताओं से भी ऊपर स्थापित करते हैं वहीं आत्मतत्व के मर्मज्ञ के रूप में उन्हें सर्वोच्च स्थान प्रदान करने में भी नहीं हिचकिचाते हैं।

नचिकेता और यम के बीच आगे और हुए वार्तालाप के आधार पर तो वे एक दिक्पाल देवता, सौम्य देवता, सरल देवता, निर्मल मन देवता, किसी का

1. कठोपनिषद् 1.1.7. 2. उपर्युक्त 1.1.9 3. उपर्युक्त 1.1.22

भी अहित न चाहने वाले देवता के साथ साथ आत्म तत्व के मर्मज्ञ देवता के रूप में प्रतिष्ठापित होते हैं। पता नहीं किस षड्यंत्र के तहत यम को क्रूर देवता के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। जब कि हमारे इतने महत्वपूर्ण उपनिषद में उन्हें इतना सरल, सौम्य प्रतिष्ठापित किया गया है।

"यमराज मृत्यु के ही देवता नहीं हैं, बल्कि वह अपने भक्तों को लौकिक सुख का वर देने में भी सक्षम हैं। इसलिए वह नचिकेता को दुनियावी सुख लेने की बात कहते हैं।"

यमराज, नचिकेता को तरह तरह के लौकिक भोगों के प्रति आकर्षित करते हैं, इसका मतलब यह हुआ कि यमराज मृत्यु के ही देवता नहीं हैं, बल्कि वह अपने भक्तों को लौकिक सुख का वर देने में भी सक्षम हैं। इसलिए वह नचिकेता को दुनियावी सुख लेने की बात कहते हैं।

ये ये कामा दुर्लभा मर्त्यलोके
सर्वान् कामाँश्छन्दतः प्रार्थयस्व।[4]

मात्र तीन दिनों तक ही बिना अन्न जल के यम लोक में यम का इंतजार करने वाले नचिकेता पर सरलतम यम इतने प्रसन्न हो गए कि उन्होंने नचिकेता को उनका अभीष्ट दो वर देने के बाद भी कहा– जो जो भोग मनुष्य लोक में दुर्लभ है, उन सम्पूर्ण भोगों को इच्छानुसार माँग लो।" यह यम के सरलतम व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

इसके बाद तो यम के बारे में नचिकेता उन्हें **"अजीर्यताम् अमृतानाम्"** कहकर संबोधित करते हैं। यह तो पराकाष्ठा ही हो गयी। इस विशेषण से तो भगवान को ही पुकारा जाता है। और जब यम भगवद् स्वरूप हो गए तो वह क्रूर कैसे हो सकते हैं, यह आश्चर्य लगता है।

कठोपनिषद् के द्वितीय वल्ली में तो यम ने बहुत ही सूक्ष्मता और गूढ़ता से नचिकेता को आत्मतत्त्व संबंधी वर के तहत ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। इसे हम यम गीता के रूप में भी जानते हैं। जब वह यह बताते हैं कि लौकिक सुख प्रेय है और आत्मतत्व श्रेय है तब उनका असली सौम्य और मर्मज्ञ स्वरूप सामने आता है जिससे समाज में उनके स्वरूप को लेकर भ्रान्ति पूरी तरह दूर हो सकती है।

वह मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए कहते हैं :–

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत–
स्तौ संपरीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरो अभि प्रेयसो वृणीते
प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते।।[5]

श्रेय और प्रेय, ये दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं। बुद्धिमान् मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भली भाँति विचार करके उनको पृथक पृथक समझ लेता है। वह श्रेष्ठ बुद्धि मनुष्य परम कल्याण के साधन को ही भोग साधन की अपेक्षा श्रेष्ठ समझ कर ग्रहण करता है। मन्द बुद्धि वाला मानव लौकिक योग क्षेम की इच्छा से भोगों के साधन रूप प्रेय को अपनाता है।

इस प्रकार यम का असली स्वरूप हमारे समक्ष स्पष्ट रूप से आता है। यम कहीं से भी क्रूर प्राण लेवा देवता नहीं हैं। वह तो असली में सौम्य, सरल, मानव मात्र का कल्याण चाहने वाले हमारे प्रिय देवता हैं। हमें उनके इसी रूप की यम द्वितीया के दिन पूजा करनी चाहिए।

***

4. उपर्युक्त 1.1.25
5. उपर्युक्त 1.2.2.

नचिकेता और यमराज के संवाद का आत्म-दर्शन

डॉ. राजेन्द्र राज
स्वतंत्र पत्रकार एवं पूर्व प्राचार्य, जनता कॉलेज, सूर्यगढ़ा पुरानी बाजार, सूर्यपुरा, थाना- सूर्यगढ़ा, जि. लखीसराय (बिहार),
ईमेल- rajendraraj8140@gmail.com

यमराज की बात आते ही नचिकेता का प्रसंग मन में कौंध जाता है। असल में इस प्रसंग को हमारी अगली पीढ़ी के शिक्षकों ने पाठ्यपुस्तकों में खूब पढ़ाया है। सरल हिन्दी में नचिकेता की कहानी पहले प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तक में संकलित थी। भारतीय दर्शन में आत्मा, अमरता, सांसारिक भोग-विलास, कर्म-दुष्कर्म ज्ञान-अज्ञान, श्रेय-प्रेय आदि के बारे में जो अवधारणा बनी है, उसमें कठोपनिषद् के यम-नचिकेता संवाद की बड़ी भूमिका है। इस कथा में यमराज एक गुरु के रूप में उभरते हैं, वे एक सद्गृहस्थ हैं, जिन्हें इस बात का कचोट है कि बालक नचिकेता उनकी अनुपस्थिति में तीन दिनों तक उनके-जैसे सद्गृहस्थ के द्वार पर प्रतीक्षारत रहा है। वे उस बालक से क्षमा माँगते हैं, और तीन वर माँगने को कहते हैं। वे सर्वसमर्थ हैं, भौतिक सुख के भी प्रदाता हैं तो दूसरी ओर आत्मा की नित्यता पर, अमरत्व पर गम्भीर उपदेश करने वाले समर्थ गुरु भी। उनके उपदेशों को यहाँ सरल भाषा में समझाया गया है।

मृत्यु के देवता यमराज से पृथ्वी लोक के एक बालक का साक्षात्कार करना जिज्ञासा की पराकाष्ठा और सृष्टि लोक की असाधारण घटना है। ब्रह्मांड में कहीं कोई ऐसी घटना नहीं घटी है। हजारों वर्ष पहले एक बालक–नचिकेता के द्वारा यमलोक में जा कर प्रश्न पूछना आश्चर्य जनक घटना समझी जाती है यह सच है कि एक बालक में जिज्ञासाओं का अन्त नहीं है। अपनी चेतना के विकसित होने की प्रक्रिया में उसे सारी सृष्टि कौतूहल पैदा करती है। इस जिज्ञासा के साथ उसमें निर्भीकता थी और अपने पिता ऋषि वाजश्रवा को विश्वजित् यज्ञ के बाद बूढ़ी, निर्बल एवं बिना दूध देने वाली गौवों को दान देते समय उसने सच कहने का साहस दिखाया। शांति, नम्रता और स्थिरता के साथ उसने नीति पूर्ण व्यवहार किया। इन दुर्बल गायों को दान देने से भला कैसे पुण्य प्राप्त हो सकता है? महायज्ञ में प्रिय वस्तु दान देना है और ये निर्बल बिना दूध देने वाली गाएँ। ब्राह्मणों तथा मुनियों को क्लेश अनुभव होता होगा, लेकिन वे मौन हैं। नचिकेता को उनके क्लेश होने की आत्मानुभूति हुई और बार-बार उसने अपने पिताश्री से प्रतिकार किया। अपनी प्रिय वस्तु दान देने का आग्रह किया। पिता का रोष बढ़ गया और उनका अहंकार एक पिता होने के कारण फूंफकार उठा। क्रोध तो एक सर्प के समान होता है और नचिकेता को सबसे प्रिय वस्तु होने के कारण उसे ही दान करने की बात कह दी।

तरकश से बाण निकल चुका था। पितृभक्ति एवं

विनम्रता के सामने पिता का क्रोध हार गया। वे पश्चाताप करने लगे। यहां तो नचिकेता को बात समझते विलंब नहीं लगा और मृत्यु के देवता यमराज के यहां चलने को तैयार हो गए। एक पिता होने के कारण ऋषि वाजश्रवा को अपने पुत्र को डाँटने और क्रोध करने का पूरा अधिकार था, लेकिन उन्हें इसका आभास नहीं था कि नचिकेता इतना दृढ़-निश्चयी और संकल्पवान् बालक है। उसमें इतनी समझदारी है। वह अपने पिताश्री के कहे वचन का ही तो पालन कर रहा था। अपने क्रोध करने और बिना कुछ परिणाम की चिन्ता करने के कारण एक साधारण मनुष्य के समान उसके पिता ने कह दिया था। यहाँ तो नचिकेता में असाधारणता भरी हुई थी। उसमें तात्त्विक ज्ञान भरा था। एक बालक में वचन के प्रति दृढ़ता और कठोरता से पालन करने की भावना कहां होती है। बाल्याकाल में भी काल्पनिक और चंद्रमा, तारे आदि को तोड़ कर लाने की लालसा भरी होती है? पिता वाजश्रवा अपने इकलौते पुत्र को यमलोक जाने से रोक नहीं पाए।

मृत्यु के नाम से क्या ज्ञानी-अज्ञानी,मनुष्य और अन्य जीव-जन्तु भयभीत हो जाते हैं। वे अजर, अमर और अविनाशी आत्मा के मर्म को विस्मृत कर जाते हैं। मृत्यु से बचने के लिए तरह-तरह के सुरक्षा के उपाय की खोज करते हैं। आज भी मनुष्य मृत्यु की पहेली को सुलझाने में प्रयत्नशील है। स्वयं को युवा देखना चाहता है। वीर और धर्मपरायण राजा ययाति ने तो पुत्र से यौवन माँग लिया था। जीवन जीने की लालसा और तृष्णा के कारण वे आत्मा के रहस्य को भूल गए थे।

यमलोक के दूतों को इस बालक को देख कर आश्चर्य हो रहा था। वह निर्भीक बना हुआ था और यमराज से दर्शन करना चाहता था। मृत्यु के बाद प्राणी यहां आता है और कर्मों के अनुसार उसे स्वर्ग या नरक मिलता है। यमदूतों के समझाने के बाद भी दृढ़ निश्चयी नचिकेता तीन दिनों तक भूखे-प्यासे यमराज की प्रतीक्षा करता रहा। ये यमराज ही धर्मराज हैं और शुभ-अशुभ कर्मों के परिणाम के आधार पर न्याय करने वाले। महाराज चित्रगुप्त इनके ही स्वरूप में लेखापाल के समान हैं। विश्व के इन्हें काल, मृत्युदेव और यम कहा जाता है। ब्रह्मांड के दक्षिणी दिशा के दिक्पाल राजा यम की जुड़वा बहन यमी है। भगवान् विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा से भगवान् सूर्य के पुत्र यमराज का जन्म होना माना जाता है। उनका विवाह दक्ष प्रजापति की तेईस कन्याओं से हुआ था।

"ये यमराज ही धर्मराज हैं और शुभ-अशुभ कर्मों के परिणाम के आधार पर न्याय करने वाले। महाराज चित्रगुप्त इनके ही स्वरूप में लेखापाल के समान हैं। विश्व के इन्हें काल, मृत्युदेव और यम कहा जाता है। ब्रह्मांड के दक्षिणी दिशा के दिक्पाल राजा यम की जुड़वा बहन यमी है। भगवान् विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा से भगवान् सूर्य के पुत्र यमराज का जन्म होना माना जाता है।

यमराज भी विस्मय में पड़ गए। उनके नाम से लोग काँपते हैं और यहां आने का दुस्साहस करना आश्चर्यजनक है। पृथ्वी लोक के भारतवर्ष का यह बालक कितना निर्भीक और तत्ववेत्ता मालूम पड़ रहा। इस लघु वय में इसे आत्मा के रहस्य एवं गूढ़ता जानने की जिज्ञाषा है। बालक के दृढ़ निश्चय के सामने और लौटने के लिए कहने के बाद भी वह नहीं हिला।कई प्रकार के प्रलोभन दिए। अन्त में प्रसन्न हो कर उन्होंने

उसे तीन वरदान मांगने को कहा था। उसे भौतिकता की आकांक्षा नहीं थी। उसने अपने पिता के क्रोध शांत होने और स्वीकार करने का पहला, स्वर्ग में देवी-देवता के अजर-अमर होने एवं स्वतंत्र विचरण करने तथा तीसरे वरदान में मृत्यु व जीवन के चक्र चलने, इससे मुक्ति आत्मा के रहस्य के बारे में समझाने को कहा गया।

हमारा शरीर ब्रह्म की नगरी है और हमारे हृदय में ब्रह्म रहते हैं। जो इस रहस्य का ध्यान एवं चिंतन करता है, उसे जन्म एवं मृत्यु से मुक्ति मिलती है। आत्मा न मरती है और न किसी को मारती है। यमराज ने नचिकेता को बताया था कि प्रत्यक हृदय में ईश्वर का वास है। कण-कण में परमपिता परमात्मा की सत्ता हैं।

यमराज ने दोनों प्रश्नों के उत्तर तो सहज दे दिए। अग्नि का ज्ञान दिया। तीसरे प्रश्न के उत्तर में पुनः उन्होंने बालक समझ कर बहलाना चाहा। कोई अन्य वरदान जो सांसारिकता, धन-दौलत आदि से संबंधित हो मांगने के लिए कहा। नचिकेता के तीसरे वरदान मांगने के अनुसार उसे यमराज ने मृत्यु के रहस्य एवं आत्मा के रहस्य के बारे में बताया था। पृथ्वी लौटने पर उसके पिता ने अंक में लगा लिया था। उसने पृथ्वीवासियों के बीच मृत्यु के रहस्य एवं आत्मा के ज्ञान के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी दी थी।

एक प्रकार से नचिकेता और यमराज के बीच का यह संवाद जीवन-मृत्यु के चक्र, मुक्ति एवं आत्मा के अविनाशी होने को ले कर गंभीरता से भरा हुआ है। इस पर बड़े-बड़े तत्व ज्ञानियों ने मंथन किया है।

यह प्रश्न अब भी प्रासंगिक है। तत्त्वदर्शी और ज्ञानी आज भी शरीर और आत्मा के संबंध के बारे में वर्णन करते हैं। यह भारत वर्ष ही है, जहाँ नचिकेता-जैसा बालक भौतिकताओं की इच्छा से परे आत्मा,और परब्रह्म के बारे में जानने की जिज्ञासा रखता है। भरत जैसा बालक कण्व मुनि के आश्रम में शेर के शावक के साथ खेलता है। शिवाजी अपने गुरु रामदास की आज्ञा से शेरनी का दूध ले कर आते हैं। सावित्री अपने पति के असामयिक देहांत पर यमराज के सामने अड़ जाती है और उनका पति जीवित हो जाता है। सती अनसूया के भगवान् ही पुत्र बन जाते हैं।

कठोपनिषद की अमर कथा में बालक नचिकेता ने मृत्यु के देवता यमराज,जो भैंस पर आरूढ़ हैं, दक्षिणी दिशा के दिक्पाल हैं, गदा रखते हैं जो अत्यंत भयानक हैं और जिनकी आंखें लाल हैं, से आत्मा,परमात्मा का ज्ञान प्राप्त किया। हमारे ऋषि-मुनियों ने अरण्य में इन दार्शनिक प्रश्नों पर चिंतन किया। विश्व के सब से प्राचीनतम सनातन हिन्दू धर्मशास्त्र में वेदों में आत्मा, परमात्मा, सृष्टिवाद के बारे में विस्तार से बताया गया है। उपनिषद काल में भी ऋषियों-मुनियों ने एकांत, नीरव वनों के आश्रम में शिष्यों को समीप बैठा कर इनका ज्ञान दिया था। देववाणी वेदों के मंत्र सूत्रात्मक और वैज्ञानिक हैं। हमारे शास्त्रों के ज्ञान में तार्किकता है और संवादों से भरे हुए हैं। परलोक वाद, पुनर्जन्म, अवतार वाद, पुरुषार्थ, आश्रमवाद, मुक्तिवाद आदि विशेषताएँ हैं। हमारा शरीर ब्रह्म की नगरी है और हमारे हृदय में ब्रह्म रहते हैं। जो इस रहस्य का ध्यान एवं चिंतन करता है,उसे जन्म एवं मृत्यु से मुक्ति मिलती है। आत्मा न मरती है और न किसी को मारती है। यमराज ने नचिकेता को बताया था कि प्रत्यक हृदय में ईश्वर का वास है। कण-कण में परमपिता परमात्मा की सत्ता हैं।

महान संत कवि तुलसीदास का प्रसिद्ध दोहा–

"ईश्वर अंस जीव अविनासी, चेतन अमल सहज सुख राशि" से इसे सहज समझा जा सकता है। शरीर के नाश होने पर आत्मा का विनाश नहीं होता। आत्मा अनंत और अनादि है,जो न तो जन्म लेती है और न ही मरती है। साधक नचिकेता को यमराज परब्रह्म ॐ के प्रतीक के रूप में हैं। वेदों के आत्मा-परमात्मा के रहस्य को जानने के लिए नचिकेता-यमराज के वार्तालाप हैं। ज्ञान, भक्ति और कर्म के ग्रन्थ 'गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने संशय में पड़े अर्जुन को आत्मा के बारे सरल रूप में समझाया था–

'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवीन देही।

'दूसरे अध्याय के 22 वें श्लोक में यह गया कि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्याग कर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है,वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त करता है। अगले 23 वें श्लोक में आत्मा के बारे में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को समझाया है

नैनं छिदन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयतिमारुतः।।

इस आत्मा को शस्त्र नहीं काट सकते, इसको आग नहीं जला सकती, इसको जल नहीं गला सकता और वायु नहीं सुखा सकता। आगे भगवान ने कहा कि यह आत्मा नित्य, सर्वव्यापी, अचल, स्थिर रहने वाला और सनातन है। जो जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है और मरे हुए का जन्म निश्चित है। संपूर्ण प्राणी जन्म से पहले अप्रकट थे और मरने के बाद भी अप्रकट हो जाने वाले हैं, केवल बीच ही प्रकट हैं, फिर ऐसी स्थिति क्या शोक करना है? इसी संधि-काल के ज्ञान को नचिकेता प्राप्त करता है।

***

यम गाथा

भारतीय परम्परा में यमगाथा का विशिष्ट महत्त्व रहा है। पारस्करगृह्यसूत्र में कहा गया है कि अन्त्येष्टि के बाद श्मशान से लौटते हुए यमगाथा अथवा यमसूक्त का गान करें (3.10.9)। सम्भावना है कि लौकिक संस्कृत भाषा में अनेक यमगाथाएँ रहीं होंगी, जिनमें से एक आज परम्परा में बची हुई है। इसके भी अनेक पाठ मिलते हैं। अनंत भट्ट ने विधान पारिजात के उदकविधान प्रकरण में इसका पाठ उद्धृत किया है-

अहरहर्नयमानो गामश्वं पुरुषान् पशून्।
वैवस्वतो न तृप्येत सुरया इव दुर्मतिः।।

इस यमगाथा को आज भी पारम्परिक लोग श्मशान से लौटते समय पढ़ते-गाते हैं। इसका अर्थ है कि हाय! यम प्रतिदिन इतनी गायें, मनुष्य तथा पशु को ले जाते हैं तब भी वे संतुष्ट नहीं होते, जैसे दुर्बुद्धि लोग सुरा पूने से संतुष्ट नहीं हुआ करते हैं।

यहाँ संसार की असारता तथा यमराज को कोसने की बात है। प्रतीत होता है कि इस प्रकार के भाव वाली यमगाथा परवर्ती काल में लोकभाषा के छन्दों में बदल गयी। सम्भव है कि कहीं उनका संकलन पाण्डुलिपियों में मिल जायें। इस यमगाथा में शान्त रस की उच्च अभिव्यक्ति हुई है।

***

श्री गोवर्धन दास बिन्नाणी 'राजा बाबू'

प्रभात फेरी की शुरुआत कैसे हुई

जैसा आप सभी प्रबुद्ध पाठक जानते हैं कि प्रभात फेरी में प्रभात से मतलब सुबह चार बजे के बाद वाला समय (ब्राह्ममुहूर्त), जबकि फेरी का तात्पर्य आसपास घूमना...। इसलिए प्रभात फेरी वह है जब सुबह के समय कुछ लोग एकत्रित होकर अपने आसपास के इलाके में घूमते हुये थोड़ी ऊँची आवाज में कुछ सकारात्मक संदेश देने का प्रयास करते हैं। आपने भी देखा होगा कि स्वच्छता का संदेश,जल संरक्षण का संदेश आदि के लिये प्रभात फेरी का आयोजन होता रहता है।

लेकिन जब सबेरे सबेरे पौ फटने के साथ ही 'राधे गोविन्द, गोविन्द गोविंद, हरे राम हरे राम, हरे कृष्ण हरे कृष्ण, श्रीमन् नारायण नारायण, जय जयश्री राम, जय जय सियाराम' गूँजाते हुये या सुमधुर आवाज में ढोल मंजीरों के साथ, छम छमियाँ बजाते, भजन कीर्तन करते हुये हमारे मोहल्लों के चक्कर लगाते हैं, तब हम इसे धार्मिक प्रभात फेरी कहते हैं। धार्मिक प्रभात फेरी को लेकर भाग लेने वालों में प्रतिबद्धता इस कदर होती है कि सर्दी हो या गर्मी, बारिश हो या भीषण ठंड, कभी बाधित नहीं होने देते क्योंकि इसमें भाग लेने वालों का यह मानना होता है कि भजन-कीर्तन व भक्ति भाव के चलते एकता व मैत्री तो विकसित होती ही है, साथ ही साथ सुबह की ताजी हवा मन, मस्तिष्क व शरीर को स्वस्थ रखने का स्वतः ही एक जरिया बन जाती है। धार्मिक प्रभात फेरी के माध्यम से शामिल लोग अनेक सकारात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर भी पूरा पूरा ध्यान रखते है जिसमें शामिल है अपने अपने मित्रों को आलस्य त्याग नित्यकर्म में लगाना, बच्चों को सुबह उठकर पढ़ने के लिए प्रेरित करने के अलावा उन माताओं, बहनों और लोगों को सुबह सुबह ही भगवान का स्मरण करवा देना, जो किसी कारणवश पूजा अर्चना नहीं कर पाते।

अब आपके ध्यानार्थ बताता हूँ कि पौराणिक कथाओ एवं शास्त्रों से ज्ञात होता है कि प्रभात फेरी कृतयुग, जिसे हम सतयुग के नाम से जानते हैं, के समय से चली आ रही है।

प्राप्त जानकारी अनुसार सतयुग में जब प्रभु विष्णु ने नरसिंह अवतार

सन् 1947ई. में कोलकाता में जन्मे राजा बाबू मूलतः बीकानेर के निवासी हैं। आप देश के प्रसिद्ध वित्तीय सलाहकार तथा व्यवसायी हैं। साथ ही समाज-सुधार तथा जनहित के कार्यों के लिए आप जाने जाते हैं। अपनी लेखनी के माध्यम से समाज-सुधार तथा धार्मिक तथ्यों का प्रसार आपका बचपन से ही शौक रहा है। देश के विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख प्रकाशित होते रहे हैं।

धार्मिक प्रभात फेरी की परम्परा बहुत जगहों पर है। मोकामा में मैंने भी 1996-98 के बीच लोगों को एक खास राजकीय वेष में ढोलक-झाल लेकर गाते हुए प्रभात फेरी लगाकर लोगों को जगाते हुए देखा है। संस्कृत साहित्य में मागधों के द्वारा राजा की स्तुति कर उन्हें जगाने का उल्लेख वाल्मीकि ने भी किया है। राजधानी के अतिरिक्त अन्य स्थलों पर भगवन्नाम लेने की प्राचीन परम्परा का उल्लेख हमें मिल जाता है। इस लेख में इसी प्रभात फेरी के आरम्भ पर लेखक ने अपना मन्तव्य व्यक्त किया किया है। -सं.

लेकर हिरण्यकशिपु का पेट चीर कर उसे मार अपने भक्त प्रह्लाद की जान की रक्षा करने के पश्चात् उससे अर्थात् प्रह्लादजी से कहा कि आप मेरे साथ वैकुण्ठ चलो। तब प्रह्लादजी ने कहा– "प्रभु मैं स्वार्थी भक्त नहीं हूँ। मेरे जो यहाँ जो भी बंधु बाँधव हैं, वो यहाँ कष्ट पाते रहें और मैं अकेला वैकुण्ठ चलूँ। ये मुझे अच्छा नहीं लगता है। मेरा मन है कि मैं इन सबको वैकुण्ठ ले कर आऊँ।"

यह सुन प्रभु ने कहा कि 'वैकुण्ठ कोई मेला तो है नहीं कि सबको ले कर चल पड़े। वहाँ ऐसे तो ये नहीं आ पायेंगे इनको तुम कैसे लेकर आओगे।'

तब भक्त प्रह्लाद ने प्रभु से कहा कि 'आपके नाम की महिमा से इनको लेकर आऊँगा।'

यह सुन प्रभु ने कहा कि 'तुम्हारे पिताजी ने ऐसे ऐसे भारी प्रतिबंध लगाये थे जिसके चलते इन लोगों में से किसी ने कभी भी नाम लिया ही नहीं है। इस हालात में अब ये सब कैसे वहाँ आयेंगे?'

तब प्रह्लादजी ने कहा कि "मैं इन सबसे प्रार्थना करूँगा कि हरि नाम लो, हरि नाम लो।"

यह सुन फिर प्रभु ने कहा कि 'यदि इन्होनें नहीं लिये तो।'

फिर भक्त प्रह्लाद ने प्रभु को बताया कि 'यदि इन्होनें मेरे निवेदन पश्चात भी नाम नहीं लिया तो मेरे पास दूसरा उपाय भी है।'

यह उत्तर सुन प्रभु ने पूछ बैठे 'दूसरा उपाय क्या है?'

दूसरे उपाय के बारे में प्रह्लादजी ने कहा कि 'मैं रोज सुबह उठकर के अपने नगर में घूम-घूम कर जोर-जोर से आपका नाम लूँगा– "नारायण नारायण", "गोविंद-गोविंद", "गोपाल – गोपाल।"

"प्रभातफेरी का नाम आते ही किसी विशेष अवसर का भाव खुद-ब-खुद मन में उभरने लगता है क्योंकि प्रभात फेरी सद्भाव बढ़ाने व जन जागृति का एक सशक्त जरिया है। स्वास्थ्य की बेहतरी से जोड़कर इसमें ज्यादा से ज्यादा लोगों को शामिल करने की कोशिश भी देखी जाती रही है। इस प्रयास में भी पर्याप्त सफलता भी मिली है।"

तब प्रभु ने जानना चाहा कि 'उससे क्या होगा?'

इस पर प्रह्लादजी ने उन्हें बताया कि 'उससे मेरे नगर के लोग यह सोचकर कि हमारे राजा को क्या हो गया है, जो ये नाम लेकर चिल्लाते हुए घूम रहे हैं। तो सब लोग अपने-अपने घरों से निकाल कर बाहर आयेंगे, यह देखने के लिये कि मुझे क्या हो गया है। तो वो आँखों से तो मुझे देखेंगे, पर कानों के रास्ते आपका नाम उनके अन्दर चला जाएगा। एक दो दिनों पश्चात् अवश्य ही कुछ लोग मेरे साथ इसमें शामिल भी होंगे और धीरे धीरे वह संख्या बढ़ती चलीजायेगी। इस तरह उनके कल्याण का रास्ता खुल जायेगा, वैकुण्ठ के दरवाजे खुल जायेंगे।'

इस प्रकार, प्रभात फेरी की शुरुआत इस तरह विष्णु भक्त प्रह्लादजी ने सतयुग में ही कर दी थी।

आप सभी जैसा जानते हैं कि प्रभातफेरी का नाम आते ही किसी विशेष अवसर का भाव खुद-ब-खुद मन में उभरने लगता है क्योंकि प्रभात फेरी सद्भाव बढ़ाने व जन जागृति का एक सशक्त जरिया है। स्वास्थ्य की बेहतरी से जोड़कर इसमें ज्यादा से ज्यादा लोगों को शामिल करने की कोशिश भी देखी जाती रही है। इस प्रयास में भी पर्याप्त सफलता भी मिली है।

अनेक सन्त धार्मिक प्रभात फेरी का समय समय पर विभिन्न शहरों में आयोजन करते रहते हैं, जिसके चलते वे समाज में शुभता के विकास के लिए कुछ न कुछ नया तरीका अपनाते हैं। लेकिन सभी संतों का उद्देश्य अशुभ प्रवृत्तियों को समाप्त करना तो होता ही है साथ ही साथ वे सृष्टि की समस्त इकाई के आत्मिक विकास पर जोर देते हैं। उनका पूरा प्रयास होता है कि केवल मनुष्य ही नहीं, जीव-जंतु, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे व समस्त जड़-चेतन में शुभता का वास हो। जब पूरे वातावरण में शुभता व्याप्त हो जाती है तो समाज से विद्वेष, घृणा व कलह आदि अशुभ प्रवृत्तियां धीरे-धीरे विलीन होने लगती हैं और मैत्री भाव का पदार्पण होने लगता है।

इसके अलावा जैसा हम सभी जानते है कि पेड़-पौधे, जीव-जंतु, पशु-पक्षी आदि भगवान का नाम नहीं ले सकते यानि हमारी तरह बोल नहीं सकते लेकिन जब हम प्रभातफेरी में भजन-कीर्तन करते चलते हैं तो भगवान का नाम उनके कानों में भी पड़ता है यानि वे सुन सकते हैं क्योंकि पेड़ों में भी जीवन होता है यह तो हम सभी बचपन में ही चौथी पाँचवी में पढ़ चुके हैं इसलिये प्रभात फेरी के दौरान लिये गये प्रभु नाम से इनके भीतर भी सकारात्मकता जन्म लेती है। इससे स्पष्ट है कि फेरी के समय लिये जाने वाले नाम के चलते मनुष्य के साथ साथ पूरा वातावरण सकारात्मक होने लगता है। और जब इसमें निरन्तरता रहती है तो धीरे धीरे समाज से कलह, वैमनस्य व घृणा के भाव दूर हो मैत्री भाव को प्रमुखता मिल जाती है।

अन्त में सारांश यही है कि निरन्तर धार्मिक प्रभात फेरी में भागीदारी करने से मन से विकार दूर होते हैं फलतः शरीर स्वस्थ रहता है और समाज में सकरात्मक भावना को बढ़ावा मिलता है।

***

मगध क्षेत्र में यम द्वितीया- भैया दूज

श्रीमती आरती मिश्रा 'मानव'
श्रीराधा कृष्ण ठाकुर बाड़ी
विष्णुधाम, सामस, शेखपुरा, 811101

लगभग सम्पूर्ण उत्तर भारत में अवधारणा है कि यमराज इस दिन अपनी बहन यमुना के घर जाते हैं तथा उनके घर का भोजन ग्रहण करते हैं। इसकी स्मृति में यम-द्वितीया मनायी जाती है, जिसमें भाई अपनी बहन के घर जाते हैं तथा उनके यहाँ अन्न खाते हैं। यदि बहन का विवाह नहीं हुआ है तो अपने ही घर में बहन के हाथ से दिया हुआ अन्न खाते हैं। केराव (कलाय) अन्न है, इसे अंकुरित कराया जाता है। जो दाना न तो अंकुर देता है नही वह कोमल होता है, वज्र के समान कठोर होता है, उसे चुनकर बहन अपने हाथ से भाई को देती है। कामना करती है कि भाई के दाँत इतने मजबूत हों कि वह इसे भी चबा जाये। इस भैया दूज की मुख्य बात है, बहन के घर भोजन करना, पर इसे मनाने की विधि अलग अलग है। यहाँ मगध क्षेत्र के लोकाचार का प्रलेखन प्रस्तुत है। लेखिका का यह अनुभूत विषय है अतः लेख की प्रामाणिकता है। जिस प्रकार आज लोक-संस्कृति विकृत होती जा रही है, उसमें आशा है कि भविष्य में यह आलेख बहुत काम देगा। यहाँ चार पारम्परिक गीत भी दिये गये हैं।

श्री कृष्णाय नमः

ऐतिहासिक दृष्टि से विशिष्ट मगध क्षेत्र (पाटलिपुत्र-राजगृह-गयाधाम) सदैव पौराणिक एवं शास्त्रीय व्रत त्योहारों एवं अनुष्ठानों को लोकरंजक परम्पराओं के रूप में मनाते रहा है जिसमें शास्त्र सम्मत विधि विधानों को विशेष प्रकार से आयोजित कर उन्हें एक अनुपम प्रस्तुति प्राप्त हो जाया करता है। यहाँ उल्लेख्य विषय 'यम द्वितीया' भी इसी प्रकार का एक आयोजन है जो यमपूजा जैसे शास्त्रीय पूजन को लोकरीति से जोड़कर भाई की सर्वतः रक्षा हेतु बहनों के द्वारा मनाया जाता है। कार्तिक शुक्ल पक्ष द्वितीया को सामूहिक रूप से बहनें इसका आयोजन करती है।

इससे पूर्व कि इसे मनाने की परम्परा की चर्चा की जाय यह उल्लेख्य है कि हम सदैव यम को मृत्यु के देवता के रूप में मानते रहे हैं। यह जानते हुए भी कि मृत्यु अटल सत्य है एवं अपरिहार्य है हम यम को अपने निकट आने से रोकने का भरसक प्रयत्न करते हैं। यह यम द्वितीया भी इसी प्रकार की मान्यता पर आधारित लोक परम्परा है जिसमे बहन अपने भाई की आसन्न मृत्य का संवाद पाकर उसे रक्षित करने के लिए चित्र-विचित्र प्रयत्न करती हुई अंततः सफलता प्राप्त करती है। अन्य पूजन अनुष्ठानों की तरह इसकी लिपिबद्ध कथा की कोई पुस्तक है यह ज्ञात नहीं पर इस अवसर पर दंत कथाओं के रूप में कुछ कहानियाँ कही जाती है। चूंकि

ये कहानियाँ महिलाएँ परस्पर कहती सुनती है इसीलिए इन कहानियों के ताने-बाने विविध रूपों में बुने होते हैं तथापि सभी कहानियों के मूल में यही भावना निहित होती है, कि भाई को यम रूपी मृत्युदेव से बचाने के लिए बहने विशेषतः प्रयत्न करती है। कथाओं का विस्तार तो यहाँ अप्रस्तुत्य है अत: उनका सार संक्षेप ही ग्राह्य होगा। एक कहानी में –

प्रचलित लोककथा

मातृ पितृ विहीन बड़ी बहन एवं छोटे भाई के कष्टकर जीवन और श्रद्धा से प्रसन्न देवता से बहन को पशुपक्षी की भाषा समझ लेने का अधिकार प्राप्त होता है। इसी कारण एक चील दंपति के वार्तालाप से बहन को पता चलता कि चील की गर्भवती पत्नी किसी ऐसे बालक का मांस खाना चाहती है जिसे कभी किसी ने गाली नहीं दी है अर्थात् जिसकी हड्डी का अपशब्दों से बिझ नहीं गयी हो, अर्थात् शीर्ण नहीं हुआ हो। तभी चील उसे बताता है उस बालक के विषय में जिसे उसकी बहन इतने स्नेह से पाल रही है कि उसने कभी उसे अपशब्द से आहत नहीं किया है। वह मरनेवाला है उसी को वह खा सकेगी। चीलनी के पूछने पर, चील उसके बचने का उपाय भी बताता है। यह सब सुनकर बहन प्रातः से ही उसे गाली *(– भैया मरला हेरैला साँप काटलकन बिच्छा काटलकन मशान में गड़ा गेला...* .आदि) देती है, जिससे गाँव वाले उसे पागल समझ लेते हैं। फिर बिछावन में से सुई आदि निकालना, साँप से बचाना, आग से बचाना, शादी के समय बचाना जैसी कहानियाँ जुड़ी रहती हैं। संभवतः इसी कृपा के आधार पर यम-दुतिया के दिन बहनें प्रातः काल से ही भाइयों का नाम ले लेकर गालियाँ देने की परम्परा का निर्वहन करती हैं तथा पूजनोपरान्त जीभ में रेंगनी का काँटा चुभोकर यह कहते हुए प्रायश्चित करती हैं कि जिस जीभ से भाई को गाली दी उसी में काँटा चुभाऊँगी।

लोक-विधि

अगर कथाओं को आधार मानें तो उसकी झलक इसकी पूजा विधि मैं भी स्पष्टतः परिलक्षित होती है। यमराज के वाहन भैंसा होने के कारण ही संभवत: इसमें आंगन लीपने से लेकर आकृतियाँ" बनाने में भी भैंस के गोबर का ही उपयोग होता है। आकृतियों में दक्षिण सिर वाले यम और उत्तर सिर वाली यमिन की साँप बिच्छू झोंपड़ी जाँता (चक्की) ऊखल, मूसल, कंघी, आदि होते हैं। ये सभी कथाओं में पिरोये होते हैं।

बजरी कैसा होता है?

इस पूजन में दो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ होती है एक बजरी और दूसरा औरदा या आरवल (क्षेत्रीय नाम। बजरी जो वज्र=वज्री =बजरी के रूप में निष्पन्न प्रतीत होता है छोटे काले मटर (केराव) के वे दाने होते हैं, जो कि कई दिन पानी में पड़े रहकर भी नहीं फूलते। हमारे यहाँ जीवित्पुत्रिका व्रत के अवसर पर नवमी तिथि को की झोर भात के लिए फुलाए गए केराव में से ऐसे वज्र सदृश अनंकुरित दानों को संचित कर लिया जाता है और भाई को यम द्वितीया के प्रसाद रूप में विशेषतः सूखा नारियल (गरी) और मिश्री के साथ दिया जाता है। मान्यता है कि बजरी दांत से तोड़ने और खाने से भाई का शरीर वज्र के सदृश हो जाता है।

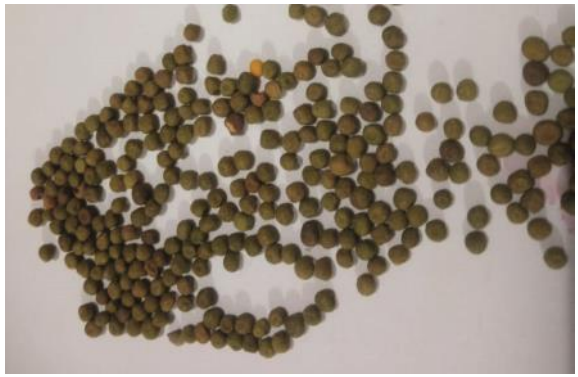

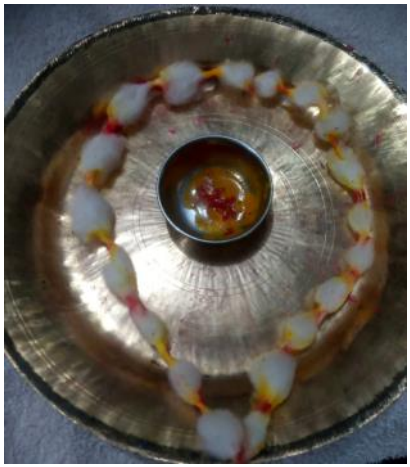

आरवल, जिसे भाई के गले में पहनाया जाता है

आरवल कैसा होता है?

दूसरी विशेष वस्तु है आरवल। इसे रुई के फाँहों को गोल-गोल माले के मनके का स्वरूप देते हुए पिसे हुए चावल हल्दी से तैयार किया जाता है तथा प्रसाद देते समय उसके गले में दीर्घायु होने की कामना के साथ पहनाया जाता है। स्वयं रुई से निर्मित होने के कारण कमजोर होकर भी यह बहन के भाई की रक्षा के हेतु सशक्त माना जाता है।

यम कूटने की विधि

यम कूटते समय बहने कथाओं को गीतों के रूप में पिरोकर गाती रहती हैं। सभी उपस्थित बहने धान कूटने वाले मूसल (समाठ) से यम यमिन के कलेजे पर रखी गयी ईंट को बाँये हाथ से संयुक्त रूप से पूजनोपरान्त कूटकर चूर-

यम कूटते समय का गीत

औरा कुटहू झौरा कुटहू कूटी ला यम के दुआर। कूटीला भैया के दुश्मन चारि पहर दिन रात।।

चूर कर देती है। इस अवधि में 'औरा कुटहू झौरा कुटहू कूटी ला यम के दुआर, कूटीला भैया के दुश्मन चारि पहर दिन रात' जैसे गीत उत्साहपूर्वक गाती है।

पूजनोपरान्त भाई को नारियल की विशेष आकृति के बनाए गए चौके पर बिठाकर तिलक लगाकर गले में आरवल माला पहनाकर हाथ में वजरी, सुखागड़ी, मिश्री प्रसाद के रूप में दिया जाता है। तदुपरान्त बहन के घर भाई को भोजन कराया जाता है। चावल दाल के भोजन में विशेषतः घी ढारने की प्रथा उल्लेखनीय है। मान्यता है कि जितनी ऊँचाई से घी की धारा थाली में गिरती है भाई की आयु उतनी ही लम्बी होती है। इसीलिए कहीं कहीं बहनें कुर्सी टेबुल ऊपर चढ़कर घी की धारा भोजन की थाली में गिराती है। यह मगध क्षेत्र में एक विशेष लोकभावनी परम्परा है।

इस अवसर पर गाए जाने वाले गीतों में उल्लेखनीय कुछ गीत यहाँ संकलित किये जा रहे हैं जो पूजन की अवधि में गाये जाते हैं।

1

आजू मोरे अपने भइया अइहें मेहमान गे माई
कैसे कैसे राखब माई हे अपने भइया के मान गे माई
बोलले दुलारू बाबू सुनह हमर बात गे माई
कोठी भरत सैंतल चउरा पनबट्टे भरत पान गे माई
नीके सुखे रखिहऽ हे धानी अपने भइया के मान गे माई

'अपने' की जगह भाई का नाम लिया जाता है तथा 'दुलारू' शब्द से अपने पति का उल्लेख है।

यम कूटने का लोकाचार

2

एही पारे अपने बहिनी बजड़िया ले ले ठाढ़ गे माई
ऊहे पारे अपने भइया खेले युगवा सार गे माई
डूबी गेलो सूरज भईया ऊगि गेलो चाँद गे माई
खाई लेहो बजड़िया भईया जैबै ससुराल गे माई
आझू के रतिया से बहिनी आधा देवो बाँट गे माई
बाबा के समपतिया गे बहिनी आधा देवो बाँट गे माई
बाबा के समपतिया हो भईया तोहरे के बाढ़े गे माई
हमें परदेशिया हो भइया मोटरिए के रे आस गे माई
सेनुरवे के आस गे माई

3

यम भइया चलले अहेरिया,
यमी बहिनी देहिले असीस हो ना
जीयह हो मोरे भइया,
जीय भैया लाख वरीस हो ना
भैया के बाढ़ो सिर पगिया,
भौजी के बाढ़ो सिर सेनुर हो ना

4

यम के घोड़िया चंचल हाटे बाटे दौड़ल जाय
काँटे कुशे ओझराइल ईंटा फोड़ि-फोड़ि खाय
भैया के घोड़िया चंचल हटे वाटे दौड़ल जाय
पाने फूले ओझराएल नारियल फोड़ि-फोड़ि खाय

इस प्रकार मगध की सांस्कृतिक, परम्परा में यम -द्वितीया में यह पूजन लोकगीतों तथा लोक कथाओं के रूप में लगभग सर्वत्र कुछ कुछ बदले हुए शब्दों या विधानों में उपलब्ध है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इन लोक परम्पराओं को यथारूप संरक्षित कर रखें जिससे हमारी पीढ़ियों में भी बहन के द्वारा भाई की रक्षा के लिए किए गये प्रयत्न आदर्श बन सकें।

***

मिथिला की लोक-संस्कृति

लोकाचार में शास्त्रीयता- यमद्वितीया के सन्दर्भ में

श्रीमती रंजू मिश्रा
द्वारा, श्री बी.के. झा, प्लॉट सं. 270, महामना पुरी कालोनी, बी.एच. यू., वाराणसी

भ्रातृ-द्वितीया—यम द्वितीया यानी भैयादूज के बारे में पौराणिक मान्यता तो बस इतनी है कि सूर्य के पुत्र यमराज इस दिन अपनी बहन यमुना के पास जाते हैं और उनके घर अन्न ग्रहण करते हैं। अतः इस दिन जो भाई बहन के घर खाना खाता है, उसकी लम्बी उम्र होती है तथा बहन का भी भाग-सुहाग बढता है। इस शास्त्रीय अवधारणा के साथ ही कुछ ऐसे लोक -व्यवहार हैं, जो अटपटे लगते हैं। जैसे इस दिन बहन के द्वारा भाई को शाप देने की परम्परा। लेखिका ने इस परम्परा के पीछे छिपे कारणों को ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से संगति बैठायी है तथा उसने स्पष्ट किया है कि इस शाप देने के पीछे जो उद्देश्य है वह कल्याणकारी है।

इसके साथ ही लेखिका ने मिथिला में भ्रातृद्वितीया की परम्परा का भी प्रलेखन किया है। गाये जाने वाले लोक गीत भी दिये गये हैं।

लोक-परम्परा नदी का बहती धारा है, जबकि शास्त्र उसी नदी में से निकाल कर संरक्षित किया गया घड़ा का जल। पर लोकधारा और नदी के किनारे गड्ढों में भरे जल के बीच अंतर समझने के लिए हमें धारा की गहराई मापनी होगी।

कार्तिक शुक्लपक्ष की द्वितीया को, यम दुतिया के नाम से जाता है। इस दिन भाई बहन का पर्व भातृद्वितीया मनाया जाता है। मान्यता है कि इस दिन बहन के यहाँ भोजन करने पर यमकोप से मुक्ति मिलती है। ऐसे वचनो का आधार पौराणिक है। सूर्य के पुत्र यम हैं और पुत्री यमुना हैं। दोनो भाई और बहन के बीच पारस्परिक स्नेह के फलस्वरूप ही यह वरदान लोगों मिला है। जिस दिन यम अपनी बहन से मिलने गये उस दिन कार्तिक शुक्ल द्वितीया तिथि थी।

यम अपनी बहन के स्वागत-सत्कार से बहुत प्रसन्न हुए और वरदान माँगने को कहा। यमुना ने लोककल्याणकारी वरदान माँग लिया कि आज का दिन हम भाइ-बहन के भेंट होने से बहुत ही आनंद का पल बीता है, तो इस भाव और इस क्षण को अमर कर दीजिए! जो कोई भाई आज के दिन अपने बहन के घर भोजन करेगा उसे यमत्रास नहीं मिलेगा। अपने बहन के स्नेहपाश में बँधे यम 'एवमस्तु' कहने को विवश हो गये।

किसी भी पर्व-त्योहार का आधार पौराणिक ही रहता है, जो देश-कोस के अनुसार लोक-संस्कृति का

नोंत लेते समय बहन के पढ़ने के लिए मन्त्र

बहन यदि उम्र में भाई से बड़ी हो तो यह मंत्र पढ़े-

भ्रातस्तवाग्रजाताहं भुंक्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीयते यमराजस्य यमुनायाश्च विशेषतः।।

बहन यदि भाई से छोटी हो तो यह मंत्र पढ़े-

भ्रातस्तवानुजाताहं भुंक्ष्व भक्तमिदं शुभम्।
प्रीयते यमराजस्य यमुनायाश्च विशेषतः।।

हिस्सा बन जाता है और इसकी निरन्तरता अक्षुण्ण बनी रहती है। प्रत्येक पर्व-त्योहार के मूल में बहुत सारे लोक-कल्याणकारी भावनाएँ सन्निहित रहती हैं। शास्त्रीयता के मूल में भी बहुत कुछ अन्तर्निहित होता है, यथा सम्बधों के बीच मूल्य-स्थापन के साथ ही समाज भावना, और वैज्ञानिकता भी बहुत सहजता से व्यवहार में घुल-मिल जाता है।

मिथिला में भाई दूज बहुत हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस दिन एक छोटा-सा रश्म होता है, जिसे 'नोत लेना' (निमन्त्रण) कहा जाता है।इस दिन बहनें सुबह ही अपने हाथ से घर-आंगन को गोबर से लीपती हैं। मान्यता है कि जितना ज्यादा लिपेंगें, उतना ही उसके भाई की आयु में वृद्धि होगी। कच्चे चावल को पीसकर घोल बना उससे बीच आंगन में दशपात पुरैन का अरिपन डालती हैं। उसी के पीछे बैठने के लिए अरिपन डालकर पीढा रखती हैं।

दशपात पुरैन पर किसी पवित्र धातु या फिर मिट्टी का कोइ गहरा पात्र रखती हैं। उस पात्र में कुम्हरे का फूल, पान, सुपाड़ी, हर्रे, मखाना और साथ में चांदी का सिक्का रखती हैं। पीठार और सिंदूर की डिब्बी, जलपात्र, धूप-दीप भी रखा जाता है। भाई उस पीढे पर अपनी अंजलि को पात्र के उपर करके बैठता है। बहन उसे सिंदूर-पिठार से टीका लगाती हैं। अंजुरी के दोनों तलहथी में भी सिंदूर पिठार लगाती हैं, फिर जितना कुछ उस पात्र में सामग्री रखा रहता है, सब कुछ उठाकर पहले उसके अंजुरी में भर देती हैं फिर जल के द्वारा हाथ से उसे उसी पात्र में गिरा देती हैं। यह क्रम तीन बार किया जाता है। इस विधान को करते हुए बहने अपने भाई के आयुवृद्धि के लिए या तो संस्कृत का या फिर लोकमंत्र को पढते हुए निभाती हैं–

आम नोतै छथि जाम के
जमुना नोतै छथि यम के
हम नोतै छी भाय के
हमरा भाय के एकसय अस्सी बरखक औरदा।।

परस्पर उम्र के हिसाब से चरण-स्पर्श किया जाता है। भाई अपनी स्थिति के अनुसार उपहार देता है। बहन सर्वप्रथम उसे बिगजी खिलाती हैं, जिसमे केला, मखान, अंकुरी, नारियल, पान-सुपारी अनिवार्यतः दिया जाता है, उसके साथ जैसा जो उपलब्ध हो मिठाई, पकवान से स्वागत करती हैं। पान, माखान, नारियल केला के लिए ऐसा कहा जाता है कि यह स्वर्ग में भी नही मिलता! कहने का यथार्थ यह है की ये सभी वस्तुऐं बहुत पोषक है, जो आरोग्य देता है। बिगजी के बाद उत्तम भोजन कराती हैं। दिन भर बहुत ही चहल पहल का माहौल बना रहता है। ममेरे, फुफेरे, चचेरे भाईयों की भी कोशिश यही रहता है कि अपनी बहन से जाकर नोत ले लें।

लोक संस्कृति की परम्पराएँ बहुआयामी होती है। इन परम्पराओं की मान्यताओं के तहत होने वाले व्यवहार में कुछ शास्त्रीय तथ्यों का विलक्षण संपृक्तता चकित कर देता है। भ्रातृ द्वितीया की लोक परम्पराओं में कहीं-कही कुछ ऐसा व्यवहार भी प्रचलित है, जो प्रथमतया तो क्षुब्ध करता है, लेकिन गहराई से दृष्टि डालने पर जब इसका अन्वेषण किया जाता है तो यही परम्पराएँ मन को मुग्ध भी कर देती है।

दसपात पुरैनि अरिपन एवं भाई से नोंत लेने के लिए स्थान पर व्यवस्था

बहन का शाप भाई के लिए वरदान!

भातृद्वितीया के दिन कहीं-कहीं अपने भाई को बहने शापती हैं! जिस भाई के दीर्घायु होने की कामना से इतने मनोयोग और उद्गार के साथ अनुष्ठान किया जाए और ठीक इसके विपरीत व्यवहार, ऐसा शाप कि तुम्हे साँप डसे, बाघ खाए इत्यादि 'तो अचंभित होने की ही बात है, लेकिन इस तरह के लोकपरम्पराओं का आधार शास्त्रमूलक सिद्धान्त ही रहता है। इस लोकपरम्परा का आधार भी कहीं न कहीं ज्योतिषीय लगता है।

जो भी प्राणी जन्म लिया है,उसकी मृत्यु निश्चित है। यह शाश्वत सत्य है, लेकिन मृत्यु को टालने का जद्दोजहद जीवन भर चलता ही रहता है। आयुर्वेद, ज्योतिष, तन्त्र-मन्त्र और भी कतिपय सांगोपांग पर आश्रित जीवन अपनी मान्यताओं और मूल्यों पर विश्वास के संग संघर्षरत और गतिशील रहता है। आयुर्वेद का सिद्धान्त है कि सौ प्रकार का मृत्यु होता है, उसमे से अंतिम मृत्यु का निवारण नहीं है, बाँकी निन्यान्वे तरह के मृत्यु को टाला जा सकता। ज्योतिषशास्त्र कहता है कि मृत्यु तो अवश्यम्भावी है ही, लेकिन निकट संबंधियों के ग्रहगोचर का सापेक्षिक प्रभाव भी इसे प्रभावित करता है। ज्योतिषीय अवधारणा में प्रारब्ध और मानसिक सुख -दुख को भी एक प्रमुख तत्व माना जाता है और उस पर विचार भी किया जाता है। प्रारब्ध के भोग का क्षय नही होता, लेकिन पारिवारिक समिष्टगत भाग्य नक्षत्र, दुःख-सुख का गोचर, ये सब मिलकर भवितव्यता के प्रभाव को कम या ज्यादा करता है। गणना में इसे ही कहते हैं सापेक्षिक प्रभाव!

टल जातीं हैं मृत्यु की घड़ियाँ

उदाहरणतया इसको ऐसे समझा जा सकता है। जैसे किसी जातक की आयु कम है, लेकिन यदि किसी प्रबल सौभाग्यवती से उसकी शादी हो जाए, तो उस जातक की आयु की कक्षावृद्धि करेगा। किसी जातक के गोचर में शोक लिखा है, लेकिन किसी निकट संबन्धियों में विशेष रुप से प्रभावी ऐसे योगों का गोचर न हो तो इस स्थिति में जातक को वैयक्तिक रूप से पीड़ा तो होगी, हो सकता है कि उसको यह पीड़ा उसके कोइ प्यारा पालतू पशु-पक्षी के खोने से मिले। इस तरह के बहुतों कारण से भी गृहस्थ के घर में पशु- पक्षी पालने का विधान था, क्योंकि प्रारब्ध तो अपना अच्छा या बुरा फल किसी न किसी रुप में देता ही है। अनुकूल गोचर में अच्छा फल और प्रतिकूल गोचर में बुरा फल।

नोंत लेते समय भाई के हाथों में ये सब देकर तीन बार जल गिराती हुई इन सब को गिराती पीतल के वर्तन में हैं। हर बार भाई के हाथ और पैर पर सिंदूर और पिठार लगाया जाता है।

यदि जातक के कुंडली में किसी तरह का अनिष्टकारी फल अवश्यम्भावी हो, लेकिन आप्त सम्बधियों के रूप में सापेक्षिक सुरक्षा-कवच मजबूत है, तो इस स्थिति में उस अनिष्ट का प्रभाव न्यून हो जाता है, कुछ हल्का-फुल्का नुकसान ही हो पाएगा, यदि हल्का-फुल्का कुछ न मिले तो कुछ भारी ही लेकर जाएगा,क्योंकी प्रारब्ध का फल अवश्यमेव भोग्य ही होता है। सनातनी गृहस्थ के जीवन में अनेकों धर्मसिद्धान्त, लोकसंस्कृति और व्यवहार में जुड़ा है, भले ही उसका प्रभाव अति न्यून ही क्यों न हो! किसी को दस सन्तान हो और अगर किसी एक सन्तान के भाग्य-कर्म में मातृसुख नहीं लिखा हो, लेकिन अन्य भाई बहन को पूर्णमातृसुख हो तो इस स्थिति में उसी हिसाब से कुछ अंशों तक ही माता के जीवन को प्रभावित करेगा। ये सारी व्यवस्थाएँ काल का अवरोधक है। सापेक्षिक दुःख सुख का स्तम्भ यदि मजबूत रहेगा तो प्रारब्ध का वेग भी अपनी उपस्थिति रखते हुए उसी हिसाब से अपना प्रभाव कम- बेसी करता है। ज्योतिष शास्त्र में एक बच्चे के जन्म से उसके अच्छे बुरे प्रभावों का दूर तक के संबन्धियों पर भी विचार देता है। मानसिक दुःख-सुख को ज्योतिषशास्त्र सर्वोपरि मानता है। ढेरों छोटे-छोटे टोने-टोटके लोकजीवन में प्रचलित है। यदि किसी का बच्चा जीवित नहीं रह पाता है तो दुख से उसका नाम रख देता है फेकना, बेचना, भगलू इत्यादि कुछ ऐसा नाम कि यह बच्चा हमारा नहीं है, ऋण वसूली करने आया है, इसे फेक दो! इस तरह का टोटका कि हम इसे स्वीकार नही करते अर्थात् हमारे प्रारब्ध से वह मुक्त हो जाए। किसी के हाथ बेच भी दिया जाता है। इस सबका प्रभाव.थोड़ा न थोड़ा मन को प्रभावित करता ही है।

गूढ व्याख्या का सहज प्रचलन आदिकाल से ही लोक-संस्कृति का हिस्सा रहा है, या तो पर्व-त्योहार के माध्यम से बृहत् रूप में या छोटे से टोटके के रुप में। कुछ इसी तरह की मान्यताओं का प्रभाव भातृद्वितिया में शाप देने के कारण को दर्शाता है। इसे एक लोककथा से जोड़ा गया है, जिसमे बहन के द्वारा दिये जाने वाले गाली से उसे मर्मांतक पीड़ा होती है और उसका मारकेश टल जाता है। सुनने में तो यह मात्र सामान्य परम्परा का निर्वाह ही प्रतीत होता, लेकिन इसकी शास्त्रीय व्याख्या अपने जगह बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथ्य को विश्लेषित करता है। भैयादूज के दिन भाई को गाली देने का आधार एक लोक कथा पर ही आधारित मान्यता का निर्वाह है।

बहन के शाप से भाई की मृत्यु टल जाने की लोक कथा

एक राजा थे। उनकी दो सन्तान थीं- एक पुत्र और एक ही पुत्री। पुत्री बड़ी थी और पुत्र छोटा था। दोनो भाई बहन के बीच असीम स्नेह था। बहन का अपने भाई पर पुत्रवत् स्नेह था। भाई भी अपनी बहन को बहुत मानता था। बहन की शादी हो गई, तो वह अपने ससुराल चली गई। कालक्रमेण दिन कटता गया। भाई भी बड़ा हो गया और उसकी शादी भी तय हो गई। बहन को जब न्योता गया तो वह बहुत आनंदित हो

उठी। बहुत दिनों से वह अपने भाई की शादी देखने की लालसा के लिए बैठी थी। मन में उमंग था। बहुत शौक-मनोरथ था कि उसके भाई की शादी में कोई कमी न रहे, इसलिए उसने सोचा कि पैदल ही घूम-घूम पर नगर को देखेंगे की कैसे नगर को सजाया जा रहा है, लोग कैसे तैयारी कर रहे हैं। इसलिए वह चुपचाप अपनी पहचान को छुपा कर निरीक्षण करती रहती थी।

एक दिन वह ऐसे ही भ्रमण कर रही थी तो तेज धूप के कारण थककर एक तालाब के पास पाकड़ की छाँव में सुस्ताने के लिए बैठ गई। वहीं पास में एक कुम्हार का घर था। कुम्हार अपनी पत्नी के साथ बैठा बर्तन गढ रहा था और आपस में बातचीत भी कर रहा था। अपना काम करते हुए राजापुत्र के शादी की तैयारी और धूम-धाम को भी कितने दिनो से देख रहा था।

कुम्हाइन बोली— "हे पण्डित! देखिये न कितने शौक से राजा अपने बेटे की तैयारी कर रहा है। दस दिन से देख रहे हैं। बाट -घाट भी सजाया जा रहा है!"

अपनी पत्नी की बातों का कोई भी प्रत्युर कुम्हार ने नहीं दिया, अपना काम करता रहा। कुछ देर बाद कुम्हाइन ने पूछा- "मै बहुत देर से बोल रही हूँ लेकिन आप तो हूं-हाँ में भी कोई सहमति नहीं दे रहे हैं। कुछ बात है क्या?"

- "नहीं नहीं! मैं तो अपने काम में मगन था, तुम्हारी बातों पर ध्यान ही नहीं गया!" कुम्हाइन बोली

- "ऐसा तो हो ही नहीं सकता! आप मुझे क्यों बहला रहे है! क्या राजा ने आप से कभी उचित-अनुचित तो नहीं न कहा है?"

- "नहीं नहीं ऐसी कोई बात नहीं है।"

ये सब वार्तालाप पाकड़ की छाँव में बैठी राजा की बेटी सुन रही थी। अपने मायके के बारे में हो रही बातों को बहुत ध्यान से सुनने लगी। कुम्हाइन अपने पति से जिद कर बैठी कि क्या बात है मुझे बताइए!

उसकी जिद को देखकर कुम्हार बोला

- "तुमलोग औरत हो, तुम लोगों के पेट में बात नही पचती है। कहीं कुछ बोल दोगी, तो राजा हमे सूली पर चढा देगा!"

अब तो कुम्हाइन की जिज्ञासा और भी बढ गयी। वह जिद पर उतर गयी कि 'क्या बात है मुझे बताइए! हम शपथ से कहते हैं की मै कहीं नहीं बोलूँगी।' कुम्हार विवश हो गया।

भविष्यवक्ता था कुम्हार

कुम्हार भविष्यद्रष्टा था। वैसे भी उसका उपनाम पंडित ही होता है। कुम्हाइन से शर्त करा कुम्हार ने कहा कि जो राजा इतने धूम-धाम से आपने बेटे की शादी कर रहा है, उसे नहीं पता कि उसका पुत्र शादी की रात में शादी से पहले ही मर जाएगा। उसे मंडप पर ही साँप डस लेगा। शादी नहीं हो पाएगी। दुल्हन पूर्ण सौभाग्यवती है, लेकिन काल का काम तो प्राण को हरने का है। राजा की बेटी जब यह सब सुनी तो व्याकुल हो उठी। दौड़कर कुम्हार के पैर पर गिर कर रोने लगी और बोली

- "आप इतने ज्ञानी हैं, तो इससे बचने के उपाय भी जानते होंगे। मुझे बताइये! मैं अपने भाई के वगैर जी नहीं सकूँगी। मै अपना प्राण उत्सर्ग कर दूंगी।"

अब तो कुम्हार पशोपेश में पड़ गया। बहुत समझाया कि भगवान के इच्छा के आगे ईसान का वस नहीं चलता, लेकिन राजा की बेटी उसके पैर को नहीं छोड़ी। बहुत सोचकर कुम्हार बोला

- "जो मै कहता हूं, उसे कर पाएँगी? काम बहुत कठिन है!"

- "मै अपने भाई के रक्षार्थ कुछ भी कर सकती हूं। आप मेरे भाई के प्राण बचाने की युक्ति बताइए।"

कुम्हार बोला- "आप अपने मायके जाइए और अपने भाई के साथ ऐसा ऐसा व्यवहार करें जिससे उसे तकलीफ हो। उसे गाली और शाप देते रहिए। बराती जाते समय जब वह प्रसन्नचित्त हो तब भी उसे मरण-जरण कि शाप दीजिए। इस व्यवहार से उसे मर्मांतक तकलीफ होगी।"

कुम्हार के कहने पर भाई को शाप देने लगी राजकुमारी

कुम्हार ने उसे और बहुत कुछ समझा-बुझाकर भेज दिया। जब वह घर आई तो अपने भाई पर नजर पड़ते ही खूब शापना शुरु कर दी। जब-तब केवल मरने का शाप देती थी। उसके भाई को इस बात से बहुत तकलीफ हुई। बहन का गाली और शाप अनवरत सुनते-सुनते वह बहुत दुखी हो उठा। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि जो बहन माँ के समान थी, वह उसे ऐसा शाप दे रही है। होते-होते शादी का दिन भी आ पहुँचा। उसकी बहन बरात के आगे-आगे बढ़-चढ कर केवल शापती जा रही थी।

केवल मूर्च्छा से टल गयी मृत्यु की नियति

अन्त में उसका भाई बर्दास्त नही कर सका और दुख से मूर्छित हो गिर गया। बहन सब तैयारी पहले से ही कर ली थी, तुरत उस दुल्हन से उसके गले में वरमाल डलबा दी। उधर काल मंडप पर बैठा ही रह गया। अपनी बहन से मिला मर्मांतक तकलीफ और सौभाग्यवती पत्नी के ग्रहबल पर उसका ग्रह टल गया। जिस दिन यह घटित हुआ उस दिन कार्तिक शुक्ल पक्ष की द्वितीया थी।

इस लोककथा और पौराणिक कथा के अतरिक्त भाई-दूज का एक सबल व्यवहारिक पक्ष भी है। कम से कम सालभर में एक दिन भी भाई अपनी बहन का खोज -खबर ले की वह किस परिस्थिति में है। इस मान्यता के जुड़ने से कि भाईदूज के दिन बहन का अन्न ग्रहण करने से यमताप नही मिलता, इस बहाने भी कम से कम एक दिन ही सही, व्यस्तता के बीच भी समय निकालकर अपने बहन के घर जाने के लिए बाध्य होता है और उसके प्रति उसका कर्तव्य निर्वहन भी सहजता से हो जाता है। इस विहित मान्यता के केन्द्र में गूढ निहितार्थ

“इस मान्यता के जुड़ने से कि भाईदूज के दिन बहन का अन्न ग्रहण करने से यमताप नही मिलता, इस बहाने भी कम से कम एक दिन ही सही, व्यस्तता के बीच भी समय निकालकर अपने बहन के घर जाने के लिए बाध्य होता है और उसके प्रति उसका कर्तव्य निर्वहन भी सहजता से हो जाता है।”

है। किसी के घर का भोजन उसके पारिवारिक आर्थिक स्थिति को जानने का एक बहुत अच्छा माध्यम होता है। परिवार की श्री संपन्नता को भोजन का विन्यांस और उसका स्वाद बिना कहे भी सब कुछ कह जाता है बशर्ते कि किसी पारखी और अनुभवी लोंगों के द्वारा उसे ग्रहण किया जाए।

मिथिला में शादी-ब्याह के तय होने पर लड़की पक्ष के लोग वरपक्ष के यहाँ भोजन करते हैं, जिसे खानपान या ठाँव-पीढी कहा जाता है। यह एक निरीक्षण ही है कि उनकी बेटी जहां जा रही है, उसके घर की आन्तरिक स्थिति कैसी है। भरदुतिया में भी भाई को बहन के यहाँ भोजन करने का विधान है। पहले के नारियों में कुछ विशेष ही शील-संकोच और सहनशीलता थी। वह चाहे कितना भी तकलीफ झेल ले, लेकिन अपने दुख से माँ बाप को दुख नहीं पहुचाना चाहती थी। इसलिए भाई का यह दायित्व बनता था कि वर्ष में कम से कम एकबार भी भोजन करे और उसकी स्थिति-परिस्थिति से अवगत हो।

***

भोजपुर क्षेत्र की 'चित्रगुप्त पूजा एवं भैयादूज ' का प्रलेखन

चित्रगुप्त पूजा एवं भैयादूज

सुश्री पुनीता कुमारी श्रीवास्तव
लेखिका एवं कवयित्री,
पिता- अरविन्द कुमार श्रीवास्तव, महाबीर चबूतरा,
लाला टोली, डुमराँव जिला-बक्सर (बिहार)

बिहार में बक्सर का क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। यहाँ अनेक संस्कृतियों का संगम हुआ है। हमें जानने की उत्सुकता है कि यम द्वितीया यानी भैया -दूज यहाँ पर कैसे मनाया जाता है। ऊपर के दो आलेखों में मगध एवं मिथिला की परम्परा का प्रलेखन किया गया है। यहाँ लेखिका ने बक्सर के आसपास की परम्परा पर प्रकाश डाला है। साथ ही चित्रगुप्त पूजा इसी दिन कैसे मनायी जाती है इस पर भी पर्याप्त सामग्री यहाँ है। लेखिका के द्वारा बनाया गया चित्रगुप्त दरबार का चित्र यहाँ आह्लादजनक है।

चौदह यमों में से एक चित्रगुप्त भी हैं। वे मनुष्य के अच्छे-बुरे कर्मों का लेखा-जोखा रखते हैं। कार्तिक शुक्ल द्वितीया को उनकी पूजा यह याद दिलाती है कि हम बुरे कर्मों से दूर रहें।

दीपावली के बाद भगवान श्री चित्रगुप्त महाराज की पूजा की परम्परा सदियों से चली आ रही है। इस पर्व को कायस्थ समाज के लोग बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। मगर इस पूजा से जुड़ी एक खास बातें कम लोगों को ही पता होगी कि श्री चित्रगुप्त महाराज की पूजा दीपावली के बाद क्यों की जाती है। चित्रगुप्त पूजा का रहस्य रामनगरी अयोध्या से भी जुड़ा हुआ है। जब प्रभु श्रीराम अपना वनवास काल पूरा करके अयोध्या लौट रहे थे तब उनकी राज्यतिलक में सम्मिलित होने के लिए भरतजी ने वशिष्ठजी से कहा था कि सभी देवताओं को आमंत्रण देकर बुला लीजिए। वशिष्ठजी सभी देवताओं को आमंत्रण देकर बुला लिए, परंतु गलती से चित्रगुप्त भगवान को बुलाना ही भूल गए। जब श्रीराम अयोध्या पहुँचे तो देखे कि सभी देवता वहाँ उपस्थित हैं, सिवाय चित्रगुप्त महाराज को छोड़कर। जब उन्होनें इस बारे में अपने भाई भरतजी से पूछे तो पता चला कि विशिष्ठजी के भूल के कारण चित्रगुप्त महाराज आमंत्रित नहीं हो पाए हैं।

उधर चित्रगुप्त भगवान अपना तिरस्कार समझ कर क्रोधित हो गए थे। वे अपने सारे कार्यो को ठप कर दिये एवं अपने कलम को किनारे रख दिये थे। लेखा-जोखा का काम ठप होने के कारण ये तय कर पाना मुश्किल हो रहा था कि किस प्राणी को कहाँ भेजना है। उनके क्रोध के कारण स्वर्ग और नरक के सारे काम रुक गए थे।

अयोध्या में धर्महरि मन्दिर

ये सब देखते हुए प्रभु श्रीराम ने अपने गुरु वशिष्ठजी की गलती को समझते हुए अयोध्या में भगवान विष्णु द्वारा स्थापित भगवान चित्रगुप्त की मन्दिर में विराजमान भगवान श्रीचित्रगुप्त का अयोध्या आने वाले सभी तीर्थयात्रियों को सबसे पहले श्रीधर्महरिजी का दर्शन करना अनिवार्य कर दिया, अन्यथा इस तीर्थ यात्रा का पुण्यफल प्राप्त नहीं होता। उसके बाद प्रभु श्रीराम और वशिष्ठजी चित्रगुप्त भगवान के पास जाकर अपने गलती के लिए क्षमा याचना करने लगे। चित्रगुप्त भगवान उनके याचना से प्रसन्न होकर लगभग चौबीस घंटे बाद पुनः अपने कलम की पूजा करने के बाद उसको उठाए और प्राणियों के लेखा-जोखा का काम प्रारंभ कर दिए।

तब से लेकर आज तक यहीं परम्परा चलते आ रही है कि दीपावली के बाद चित्रगुप्त भगवान की पूजा होती है। अयोध्या के चित्रगुप्त मन्दिर में बहुत ही आस्था और श्रद्धा के साथ यह पर्व मनाया जाता है। इस पूजा में वहाँ बड़ी संख्या में लोग उपस्थित होते हैं। अयोध्या के चित्रगुप्त मन्दिर सहित पूरे देश भर में कायस्थ समाज इस पूजन को करने के बाद ही लेखन का कार्य शुरु करते हैं।

भगवान चित्रगुप्त का जन्म ब्रह्माजी के चित से हुआ था, इसी के कारण इनका नाम चित्रगुप्त पड़ा। ये ब्रह्मा जी के मानस पुत्र कहलाते हैं। ये ब्रह्माजी के सत्रहवें और अंतिम पुत्र हैं। भगवान चित्रगुप्त को देवताओं के लेखापाल और यम के सहायक के रुप में पूजा जाता है। भगवान चित्रगुप्त इंसान के कर्मो के लेखा-जोखा का

पटना सिटी में चित्रगुप्त की प्रतिमा

काम करते हैं। मनुष्य के जीवन और मृत्यु की अवधि का हिसाब-किताब भी कर्मो के अनुसार ही लिखा जाता है। चित्रगुप्त भगवान के लेखा-जोखा के आधार पर ही मनुष्य को उसके कर्मो का फल यमराज के द्वारा दिया जाता है। कायस्थ कुल के लोग भगवान चित्रगुप्त के वंशज कहलाते हैं। कायस्थ कुल के लोग चित्रगुप्त भगवान की पूजा के साथ-साथ कलम-दवात और कागज की भी पूजा करते हैं। भगवान चित्रगुप्त की पूजा करने से बुद्धि, वाणी और लेखनी का आशीर्वाद प्राप्त होता है। इनके प्रमुख मन्दिर में हैदराबाद का स्वामी चित्रगुप्त मन्दिर, उत्तरप्रदेश के अयोध्या में स्थित श्री

चित्रगुप्त महाराज की पूजा (लेखिका द्वारा चित्रित)

धर्महरि चित्रगुप्त मन्दिर और तमिलनाडु के कांचीपुरम में स्थित चित्रगुप्त मन्दिर प्रसिद्ध है।

चित्रगुप्त भगवान की पूजा की विधि–

चित्रगुप्त भगवान की पूजा करने से पहले स्थल को साफ करके एक चौकी बनाए जाते हैं। उसपर एक कपड़ा बिछाकर चित्रगुप्त भगवान की तस्वीर रखी जाती है। वहीं पर पूजा की थाली में आवश्यक पूजा सामग्री रखी जाती है। उसके बाद पूजा स्थल पर गंगाजल का छिड़काव किया जाता है। उसके बाद चित्रगुप्त भगवान की प्रार्थना के लिए ये मंत्र अवश्य पढ़ना चाहिए:

मसिभाजनसंयुक्तं ध्यायेत्तं च महाबलम्।
लेखिनीपट्टिकाहस्तं चित्रगुप्तं नमाम्यहम्।।

ये मंत्र पढ़ने के बाद दीपक जलाकर चित्रगुप्त भगवान की आरती उतारी जाती है। उसके बाद अक्षत और रोली से टीका की जाती है। उसके बाद फल, मिठाई, पंचामृत और पान-सुपारी का भोग लगाया जाता है। ये सब करने के बाद परिवार के सभी सदस्य एक-एक सादे कागज को लेकर उसपर ग्यारह बार ॐ ओम चित्रगुप्ताय नमः लिखते हैं और बाकी बचे जगहों पर सभी देवताओं के नाम लिख दिए जाते हैं। उसके बाद एक-एक और सादे-सादे कागज लेकर उसपर रोली से स्वास्तिक बनाए जाते हैं और उसके नीचे अपना नाम, पता, तारीख लिखे जाते हैं और उसी कागज के दूसरी तरफ आय-व्यय का विवरण दिया जाता है। इतना करने के बाद अगले साल के लिए आवश्यक धन के लिए निवेदन किया जाता है।

श्री चित्रगुप्त भगवान की स्तुति :

चित्रगुप्त यमेश तव शरणागतम् शरणागतम्।
पूज्य पद पद्मेश तव शरणागतम् शरणागतम्।।
जय देव देव दयानिधे, जय दीनबंधु कृपानिधे।
कर्मेश जय धर्मेश तव, शरणागतम् शरणागतम्।।
जय चित्र अवतारी प्रभो, जय लेखनी धारी विभो।
जय श्याम तन चित्रेश तव, शरणागतम् शरणागतम्।।
पूर्वज भगवत अंश जय कायस्थ कुल अवतंश जय।
जय शक्ति बुद्धि विशेष तव, शरणागतम् शरणागतम्।।
जय विज्ञ शाश्वत धर्म के, ज्ञाता शुभाशुभ कर्म के।
जय शांति न्यायाधीश तव, शरणागतम् शरणागतम्।।
जय दीन अनुरागी हरि, चाहे दया दृष्टि तेरी।
कीजै कृपा करुणेश तव, शरणागतम् शरणागतम्।।
तव नाथ नाम प्रताप से, नर जाय छूट भय ताप से।
हों दूर सर्व क्लेश तव, शरणागतम् शरणागतम्।।

गरुड़ पुराण में, भगवान चित्रगुप्त का वर्ण और शब्दों का उपयोग करने वाले पहले व्यक्ति के रुप में उल्लेख किया गया है। और इनका संदर्भ पुण्य और पाप के रक्षक के रुप में किया गया है। हिन्दू ग्रन्थ के अनुसार, वे भगवान यमराज को एक सचिव के रुप में सहायता करते हैं।

भैया-दूज एवं गोधन के अवसर पर भोजपुरी क्षेत्र का लोकगीत

लोकगीतों का अपना विशिष्ट संसार है। यहाँ कृत्रिम साहित्य नहीं अपितु अंतर्मन ने निकला हुआ नैसर्गिक भाव की अमृतधारा होती है।

गोधन कुटते समय हमारे यहाँ सब बहिनों के द्वारा ये गीत गया जाता है:

गोधन कुटे जाली बहिनिया
सब बहिनी देवेली आशिष,
खुश रहस हमार भैया
जियस हमार भैया लाखों बरिस
माटी के साँप, बिच्छु, औरी
गोजर बनावेनी
मुसल से कूट-कूट के
ओहनी के भगावेनी
भाई रहस आबाद हमार
कइसनो विपति ना आवे
सौभाग्य जागो हमार भाई के
सब दुखवा भाग जाए
कुटि ना आवरा-भावरा
कुटि ना यम के दुआर
कुटि ना भैया के दुशुमन
आठ पहर दिन-रात
सब बिहिनी के इहे बा आशीष
जियस हमार भैया लाखों बरिस
जियस हमार भैया लाखों बरिस।

***

भैया दूज के दिन हमारे यहाँ सभी बहनों के द्वारा ये गीत गाया जाता है:

भाई दूज के परबिया
याद रखिह हमार भैया
अइह तिलक लगवावे
तु बजरा खाए अइह,
भुलइह मत इ दिनवा
आस पूरा करे अइह
चंदा जइसन मुखड़ा तोहार
मिट्ठा-मिट्ठा मुस्कान बा
तहरे से भैया हमार
इ दुनिया में पहचान बा,
याद रखिह आपन बहिनिया के
एह दिने भूला मत जइह
तु बजरा खाए अइह भैया
तु बजरा खाए अइह।

***

भगवान् चित्रगुप्त का परिवार

चित्रगुप्त भगवान की दो पत्नियाँ थी, पहली पत्नी का नाम इरावती था। वह ऋषि सुशर्मा की बेटी थी। इरावती से चित्रगुप्त महाराज के आठ पुत्र उत्पन्न हुए, उनके नाम हैं:

चारु, सुचारु, चित्र, मतिमान, हिमवान, चित्रचारु, अरुण और अतीन्द्रिय।

चित्रगुप्त भगवान की दूसरी पत्नी का नाम दक्षिणा था, वह मनु की बेटी थी। दक्षिणा से चित्रगुप्त महाराज के चार पुत्र उत्पन्न हुए, उनके नाम हैं:– भानु, विभानु, विश्वभानु और वीर्य्यावान्।

कायस्थ स्वयं को मानते हैं चित्रगुप्त के वंशज

यहीं बारह पुत्रों के वंश के अनुसार कायस्थ की बारह शाखाएँ हो गईं:–

श्रीवास्तव, सूर्यध्वज, वाल्मीकि, अष्ठाना, माथुर, गौड़, भटनागर, सक्सेना, अम्बष्ठ, निगम, कर्ण और कुलश्रेष्ठ।

श्रद्धा के साथ पूजा करने पर चित्रगुप्त भगवान जल्द प्रसन्न हो जाते हैं। चित्रगुप्त भगवान की कृपा से उनके भक्तों को बुद्धि, विद्या और लेखनी का ज्ञान मिलता है। चित्रगुप्त भगवान के भक्तों को कभी भी नरक में नहीं गिरना पड़ता है।

राजा सौदास द्वारा चित्रगुप्त की उपासना

एक कथा यह है कि पृथ्वी पर एक सौदास नाम का राजा था। वह सौराष्ट्र नगर में उत्पन्न हुआ था। वह बहुत ही महापापी था। पराया धन चुराया करता था एवं पराई स्त्रियों में हमेशा आसक्त रहता था। एक दिन वह जंगल में शिकार खेलने के लिए जा रहा था, तबहीं उसने कुछ ऋषि-मुनियों को एक चित्रगुप्त मन्दिर में चित्रगुप्त भगवान की पूजा करते हुए देखा। वह देख सौदास भी चित्रगुप्त पूजा करने का मन बना लिया। वह भी उसी मन्दिर में

“इंसान भले इंसान को गलत कार्य करते न देख पाए, परंतु चित्रगुप्त भगवान की निगाहें हमेशा इंसानों के कर्मो के तरफ ही लगी रहती है। इसलिए हमेशा शुभ कर्म ही करना चाहिए।”

बैठकर पूरे श्रद्धा के साथ चित्रगुप्त भगवान का पूजा किया। कुछ काल बीतने के बाद जब उसकी मृत्यु हुई तो यमराज के दूत उसे नरक लोक में ले जाने लगे। मगर चित्रगुप्त भगवान के कहने पर उसे स्वर्ग लोक में स्थान मिला क्योंकि भले वह कितना भरी पापी था, लेकिन एक बार वह पूरे श्रद्धा से चित्रगुप्त भगवान का पूजा किया था। उसी पूजा के प्रभाव के कारण उसे स्वर्ग लोक की प्राप्ति हुई।

बस इतने से ही सभी को ज्ञात हो जाना चाहिए कि जो सिर्फ एक बार चित्रगुप्त भगवान की पूजा करने से स्वर्ग लोक प्राप्त कर सकता है। तब पूरे श्रद्धा-भक्ति के साथ हर साल पूजा करने वालों को नरक द्वार कैसे मिल सकती है। पूजा कैसी भी हो पूरे श्रद्धा के साथ ही करनी चाहिए। सिर्फ ये नहीं समझना चाहिए कि व्रत वाले दिन ही व्रत करना है। सभी भगवानों के साथ चिगगुप्त भगवान की भी पूजा रोज करनी चाहिए। इंसान जो-जो कर्म करता है उन सबका हिसाब-किताब चित्रगुप्त भगवान लिख कर रखे रहते हैं। इंसानों के कर्मो के हिसाब से ही उसे अलग-अलग तरह की योनियों की प्राप्ति होती है। बहुत से इंसान ये सोचते हैं कि हमें गलत काम करते कौन देख रहा है। इंसान भले इंसान को गलत कार्य करते न देख पाए, परंतु चित्रगुप्त भगवान की निगाहें हमेशा इंसानों के कर्मो के तरफ ही लगी रहती है। इसलिए हमेशा शुभ कर्म ही करना चाहिए।

भैयादूज और गोधन

चित्रगुप्त पूजा के दिन भाई दूज (भैया दूज) का भी पर्व मनाया जाता है। इसी दिन यजराज अपनी बहिन यमुना के यहाँ जाकर अपने माथे पर तिलक लगवाए थे और उसके हाथ का बना भोजन किए थे। उसी समय से ये परम्परा चली आ रही है कि जो भी भाई इस भैया दूज के दिन अपनी बहन के यहाँ जाकर अपने माथे पर तिलक लगवाता है और अपनी बहिन के हाथ का बना भोजन करता है तो उसे अकाल मृत्यु का भय खत्म हो जाता है। भाई दूज के 22 भाई दूज इस त्योहार को 'यम द्वितीया' भी कहा जाता है।

भाई दूज का पर्व भाई-बहन के स्नेह, त्याग और समर्पण का प्रतीक है। इस दिन भाई-बहन अपने प्यार भरे रिस्ते को और गहरा करते हैं। इस दिन सभी बहनें अपने भाई की लंबी उम्र और उनकी समृद्धि की कामना करती हैं। भाई दूज को 'भबीज', 'भाई टीका', 'भाई फोंटा', के नाम से भी जाना जाता है।

यह बहुत ही विशेष त्योहार है। इस पर्व को हर साल कार्तिक महीने की शुक्ल पक्ष द्वितीया तिथि को मनायी जाती है। भाई दूज का त्योहार रक्षाबंधन के समान ही है। इसमें भी भाई-बहन एक दूसरे के लिए प्रार्थना करते हैं और उपहारों का आदान-प्रदान करते हैं।

भाई दूज के दिन बिहार की बहनें अपने भाईयों को पारम्परिक तरीके से बजरी खिलाती हैं। बजरी खिलाने से भाई मजबूत बनता है। बजरी खिलाते समय ये मन्त्र बोला जाती है:–

गंगा पूजे यमुना को
यमुना पूजे यमराज को,
सुभद्रा पूजे श्रीकृष्ण को
जैसे गंगा-यमुना की नीर बहे
वैसे ही मेरे भाई की आयु बढ़े।

एक मान्यता यह है कि बजरी खिलाने से पहले सभी बहनें अपने भाईयों को खूब कोसती है एवं गालियाँ भी देती है। उसके बाद अपने जीभों पर काँटा चुभाती है और अपनी गलती के लिए भगवान् से क्षमा माँगती है। यम द्वितीया के दिन भाईयों को गालियाँ और शाप देने से उन्हें मृत्यु का भय नहीं रहता। भाई दूज के दिन सभी बहनों को एक बात जरुर याद रखना चाहिए कि इस दिन बहनों को अपने भाईयों से झूठ नहीं बोलना चाहिए, नहीं तो भाई को अप्रिय घटना का सामना करना पड़ सकता है। इस दिन भाई को तिलक करते समय बहनों को काले वस्त्र धारण करना वर्जित होता है। भाई दूज के दिन भाई-बहन को आपस में किसी भी मुद्दे या विवाद पर बहस या झगड़ा करने से बचना चाहिए। नहीं तो मन की दुर्भावना भाई या बहन को नुकसान पहुँचा सकता है। इस दिन भाई के द्वारा दिया गया कोई

भी उपहार का अनादर नहीं करना चाहिए और न ही भाई को बहन के द्वारा बनाए गए भोजन पर कोई टिप्पणी करनी चाहिए। भाई को तिलक करने और बजरी खिलाने के बाद ही भाई बहन को भोजन करना चाहिए। बजरी खिलाने के बाद भाई को मिट्ठा अवश्य खिलाना चाहिए।

गोधन पर्व

भाई दूज के दिन गोधन कुटने की भी प्रथा है। सुबह -सुबह महिलाएँ इस त्योहार को एक सामुदायिक सभा में मनाती हैं। एक क्षेत्र की महिलाएँ एक घर के आंगन या खुले स्थान पर इकट्ठा होती हैं और एक बड़ी आयत बनाती हैं। सभी महिलाएँ इस संरचना के आसपास बैठती हैं। केन्द्र में यम की दो मूर्तियाँ बनाई जाती है उनके बगल में यमुना की भी मूर्ति बनाई जाती है। इसके अलावा साँप और बिच्छू की कई अन्य मूर्तियाँ बनाई जाती है। फिर गोबर की यम मूर्ति के छाती पर ईंट रखकर स्त्रियाँ उसे मूसलों से तोड़ती हैं। उसके बाद वहीं खड़े होकर सभी महिलाएँ अपने-अपने भाईयों के जीत के लिए मंगल गीत गाती है। उसके बाद अपने-अपने घर जाकर अपने-अपने भाईयों को बजरी खिलाती हैं।

बहन के शाप से भाई की मृत्यु टल जाने की लोककथा

भाई दूज के दिन सभी बहनें बजरी खिलाने और गोधन कुटने से पहले क्यों देती हैं अपने भाईयों को श्राप, इसके पीछे एक प्राचीन कथा यह है कि एक बार राजा पृथु के पुत्र की शादी थी। राजा ने उस शादी में अपनी विवाहिता पुत्री को भी बुलाया था। दोनों भाई-बहन में खुब प्रेम और स्नेह था। जब बहन अपने भाई की शादी में सम्मिलित होने के लिए आ रही थी, तो उसने रास्तें में एक कुम्हार दंपति की बातें सुनी। वो लोग कह रहे थे कि राजा की बेटी ने अपने भाई को कभी गाली और शाप नहीं दी है। उसका भाई बरात वाले दिन ही मर जाएगा। यह सुनते ही बहन अपने भाई को कोसते हुए घर गई और वहाँ पहुँच कर अपने भाई के साथ बरात जाने के लिए निकल पड़ी। रास्ते में साँप,बिच्छू, गोजर जो भी बाधा पहुँचाने के लिए आ रहे थे, उन सभी को मार-मार कर वह अपने आंचल में रखती जा रही थी। जब वह बरात से घर लौटी तो वहाँ यमराज पहुँच गए। यमराज भाई के प्रति बहन के स्नेह को देखकर अति प्रसन्न हुए और उन्होंने राजा पृथु की बेटी से कहा कि यम द्वितीया के दिन जो बहन अपने भाई को गाली और श्राप देगी तो उसके भाई को अकाल मृत्यु का भय कभी नहीं होगा।

भैया-दूज : पर्व एक रंग अनेक

बिहार में भैया दूज को अलग-अलग तरीके से मनाया जाता है। मिथिलांचल में इसे **भ्रातृ द्वितीया** या **भरदुतिया** कहते हैं। बहन अपने भाई की लंबी आयु की कामना करते हुए भाई को टीका लगाती है। टीका लगाने के बाद उसके हाथ में पान-सुपारी डालकर भगवान से प्रार्थना करती है कि हे भगवान! जैसे यम ने यमुना की प्रार्थना सुनी वैसे ही आप मेरी भी प्रार्थना सुनिए और मेरे भाई पर आने वाले हर संकट को दूर कर दीजिए। मेरे भाई को दीर्घायु प्रदान कीजिए।

कहीं-कहीं बहनें इस दिन **बेरी पूजन** भी करती हैं और भाईयों के स्वस्थ तथा दीर्घायु होने की मंगलकामना करके तिलक लगाती हैं और इस दिन सभी भाई अपनी बहन के घर ही भोजन करते हैं। परम्परा चाहे कोई भी हो इसमें भाई-बहन का प्यार बसा हुआ है। भाई-बहन का प्यार दुनिया का सबसे प्यारा बंधन होता है।

***

'अनर्घराघव' की रामायण-कथा

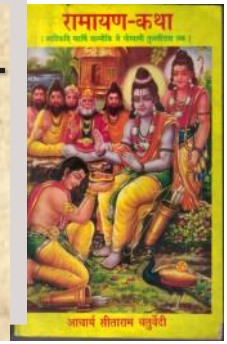

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

यह हमारा सौभाग्य रहा है कि देश के अप्रतिम विद्वान् आचार्य सीताराम चतुर्वेदी हमारे यहाँ अतिथिदेव के रूप में करीब ढाई वर्ष रहे और हमारे आग्रह पर उन्होंने समग्र वाल्मीकि रामायण का हिन्दी अनुवाद अपने जीवन के अन्तिम दशक (80 से 85 वर्ष की उम्र) में किया वे 88 वर्ष की आयु में दिवंगत हुए। उन्होंने अपने बहुत-सारे ग्रन्थ महावीर मन्दिर प्रकाशन को प्रकाशनार्थ सौंप गये। उनकी कालजयी कृति रामायण-कथा हमने उनके जीवन-काल में ही छापी थी। उसी ग्रन्थ से रामायण की कथा हम क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं।

– प्रधान सम्पादक

वामदेवके कहनेपर दशरथसे मांगकर राम-लक्ष्मणको विश्वामित्र अपने यज्ञकी रक्षाके लिये अयोध्यासे कौशिकी नदीके तीरपर बसे हुए अपने सिद्धाश्रममें लेते गए। जैसे ही राम तपोवनके पास पहुँचे कि पत्थरकी पुतली बनी खड़ी हुई जनकके पुरोहित शतानन्दकी माता और गौतमकी पत्नी वह अहल्या सजीव होकर उठ खड़ी हुई जिसका इन्द्रने शील-भंग कर दिया था।

इसी बीच बालीके डरके मारे भागे हुए सुग्रीवको लेकर हनुमान् ऋष्यमूकपर आकर रहने लगे थे। हनुमान्ने सूर्यसे व्याकरण-विद्या सीखी थी इसलिये गुरुदक्षिणामें उन्होंने सूर्यपुत्र सुग्रीवका सहायक होना स्वीकार कर लिया था। यह सुनकर बालीकी रक्षाके लिये रावणने खर, दूषण, त्रिशिरा आदिको समुद्रके उत्तर तटपर भेज जमाया। उन्हींकी सेनामेंसे सुकेतुकी पुत्री ताडका वहाँ विश्वामित्रके आश्रमके आस-पास आ आकर चकरडंड लगाती रहती थी।

वहाँ लाकर विश्वामित्रने रामभद्रको मन्त्र-सहित सारे दिव्य अस्त्र दे डाले। जब विश्वामित्र यज्ञकी दीक्षा लेने चले तभी ताडका वहाँ आ धमकी। स्त्रीको मारना अनुचित समझकर पहले तो राम बहुत हिचकिचाए किन्तु विश्वामित्रके कहनेपर उन्होंने ताडकाको मार ही डाला। फिर रामने वायव्यास्त्र चलाकर उसके पुत्र मारीचको तो उड़ा फेंका और सुबाहु आदि सब राक्षसोंको वहीं पछाड़ मारा। फिर भी स्त्रीका वध रामको खटकता ही रह गया। विश्वामित्रने जब रामको बताया कि मिथिलामें शिवजीका विशाल धनुष रक्खा है और पृथ्वीसे उत्पन्न एक सुन्दर कन्या भी वहाँ है तब लक्ष्मणसे रामने कहा कि मुझे उस धनुष् को देखनेका बड़ा चाव है। इसपर लक्ष्मणने चुटकी ली– 'और उस अयोनिजा कन्याको देखनेका भी ?' इसपर रामने उन्हें मीठी घुड़की देते हुए कहा'यह क्या अटपटी ठिठोली छेड़े दे रहे हो?'

जिस समय राम-लक्ष्मणको साथ लेकर विश्वामित्र मिथिला पहुँचे हुए थे, उसी समय रावणके पुरोहित शौष्कलने आकर सीरध्वज जनकसे कहा कि अपनी पुत्री सीता आप रावणके लिये दे दीजिए। किन्तु जनकने कहा कि मैं तो प्रतिज्ञा कर बैठा हूँ कि सीताका विवाह उसीसे होगा जो शिवजीके धनुषपर डोरो चढ़ा देगा। उसी समय शतानन्दके कहनेपर रामने वह धनुष उठाकर और खींचकर दो टूक कर डाला। जनकने कहा कि.सीताको तो रामने जीत ही लिया अब उर्मिलाको मैं लक्ष्मणके लिये दिए डालता हूँ। रावणका पुरोहित अपना मुंह-सा मुँह लिए खीझता और बड़बड़ाता हुआ लौट गया कि 'सीताको तो रावणके यहाँ आना ही पड़ेगा, जायगी कहाँ?'

दशरथके मिथिला आ पहुँचनेपर धूमधामसे रामका विवाह सीतासे, लक्ष्मणका उर्मिलासे, जनकके भाई कुशध्वजकी एक कन्या माण्डवीसे भरतका और दूसरी कन्या श्रुतकीर्तिसे शत्रुघ्नका विवाह हो गया।

तभी जाम्बवानने मतंगके आश्रममें रहनेवाली श्रमणा शबरीसे कहा कि देखो, तुम परकाया-प्रवेशकी विद्यासे मंथराके शरीरमें जा समाओ, तबतक तुम्हारे शरीरकी देखभाल हनुमान् करते रहेंगे। तुम मंथराके रूपमें यह पत्र दशरथको ले जा थमाना, जिसमें भरतको राज्य देने और रामको वन भेजनेकी बात कैकेयीकी ओरसे लिखी हुई है। बस राम वन में आकर बालीको मारकर सुग्रीवको राजा बना देंगे, हमारा काम बैठे बिठाए बन जायगा।

रावणके भक्त माल्यवानने यह समाचार सुनकर कहा– चलो, यह अच्छा ही हुआ। विराध आदि राक्षसोंसे भरे हुए विन्ध्यपर्वतसे रामकी पत्नीको हर लाना बहुत सरल हो जायगा। "हरै लगै न फिटकिरी, रंग चोखा आवे। साँप भी मर जाय, लाठी भी न टूटने पावे।"

उधर धनुष टूटनेकी ध्वनि सुनते ही परशुरामने आकर जनकको और रामको ललकार दिया। कुछ देरतक राम और परशुराममें बड़ी झों-झौं हुई। बीच-बीचमें लक्ष्मण भी फुलझड़ी छोड़ते चले जाते रहे। अन्तमें परशुरामने अपना वैष्णव धनुष रामको उठा थमाया। दोनोंमें युद्ध हुआ और परशुराम हार गए किन्तु राम फिर भी उनसे क्षमा ही मांगते रहे। परशुरामके चले जानेपर दशरथने कहा कि अब परशुरामपर रामके विजयका उत्सव मना लिया जाना चाहिए। उसी समय मन्थराने आकर कैकेयीका वह पत्र लक्ष्मणको निकाल थमाया, जिसमें जनकने पढ़ा– 'आपने जो मुझे दो वर देनेको कहे थे उनमेंसे एकसे भरतको राज्य दे दीजिए और दूसरेसे रामको चौदह वर्ष के लिये लक्ष्मण और सीताके साथ वन भेज दीजिए। जनक और दशरथ दोनों मूर्च्छित हो गिरे किन्तु राम, सीता और लक्ष्मण वनको चल दिए।

मिथिलासे लौटकर श्रमणा शबरी शृङ्गवेरपुरमें पहुँचकर फिर अपने शरीर में आ बैठी। उसी समय शृङ्गवेरपुरके बाहर इंगुदीके तले राम-लक्ष्मणने जटा बना बाँधी। निषादराज गुहने राम-लक्ष्मण-सीताको नावसे गंगा पार ले जा उतारा और वे चित्रकूटकी ओर चल दिए।

तभी दशरथकी मृत्युका समाचार सुनाकर रामको लौटा ले जानेके लिये भरत भी चित्रकूटपर जा पहुँचे। जब राम किसी प्रकार भी लौटनेको तैयार नहीं हुए तब शरभंग मुनि-द्वारा भेजी हुई रामकी खड़ाऊँ लेकर भरत वहाँसे लौटकर उन खड़ाउओंको भद्रासनपर रखकर नन्दिग्राममें जटा बढ़ाकर रहते हुए राज्यकी देखभाल करने लगे।

खर-दूषण आदिने सोचा कि दशरथके मरनेसे अशौच लगने के कारण राम-लक्ष्मण तो अस्त्र उठावेंगे नहीं। बस, उन्होंने विराधको उधर सिखा-पढ़ाकर पठा भेजा। पर विराधको यमका द्वार दिखाकर राम-लक्ष्मण

बढ़कर अगस्त्यके तपोवनकी ओर चल दिए। वहीं मार्गमें धाराधर नामके कौएने जानकीके स्तनपर चोंच आ चलाई। बस रामने आव देखा न ताव, उसपर सींकका बाण चला ही तो दिया। तब एक आँख दे देनेपर ही कहीं उसे छुटकारा मिल पाया। फिर सुतीक्ष्ण आदि महामुनियोंके आश्रमोंमेंको होते हुए वे अगस्त्यके कहनेसे पंचवटी में जाकर रहने लगे।

जब शूर्पणखा रामको विष देनेकी घात लगाकर उधर पहुँची, तब लक्ष्मणने उसके नाक-कान-ओठ काट उतारे। उसकी दशा सुनकर चढ़ आए हुए खर-दूषण आदिको रामने बातकी-बातमें वहीं ढेर कर डाला। जाम्बवानके कहनेसे श्रमणा शबरी तभी लक्ष्मणके मित्र निषादराजसे यह कहने चल दी कि तुम चलकर सुग्रीवसे रामकी मित्रता करा दो।

तभी सुनहरे हरिणके पीछे राम-लक्ष्मणके चल देनेपर रावण संन्यासी बनकर उनकी कुटीपर आ पहुँचा और 'हा आर्यपुत्र! हा आर्यपुत्र!' चिल्लाती हुई सीताको रथपर बैठाकर भाग चला। जटायुने उड़कर उसपर धावा भी बोला और उसके रथको चकनाचूर भी कर डाला, किन्तु रावण उसे घायल करके सीताको हर ही ले गया।

उसी समय वहाँ आते हुए निषादराजको विराधने आ जकड़ा। तब उसकी पुकारपर लक्ष्मणने उसे धर दबोचा और साथ ही दुन्दुभि दैत्यकी पड़ी हुई ठठरीको भी चर-चूर कर डाला। गुहने रामको सीताकी चादर निकाल दिखाते हुए कहा कि 'आकाश-मार्ग से ले जाती हुई सीताने यह चादर फेंक गिराई थी, जो हनुमानने उछल पकड़ी थी। वह सुग्रीवने आपके लिये मेरे हाथ संभाल भेजी है।' रामने कहा कि सूर्यपुत्र होने के कारण सुग्रीव भी हमारा बन्धु ही है। यह कहकर वे गुहके साथ सुग्रीव-हनुमानसे मिलने चल दिए। इतने में बालीने रामको आ ललकारा।

रामने सात ताड़के वृक्षोंको बेधकर बालीको भी मार गिराया। सुग्रीवका राज्याभिषेक हो गया और सीताकी खोजके लिये चारों ओर वानर भेज दिए गए।

इस बीच हनुमानने आकर सारी लंका भी जला डाली और रावणके पुत्र अक्षकुमारको भी मार डाला। विभीषणके समझानेपर बौखलाए हुए रावणने उसे निकाल बाहर किया पर रामने उसे झट लंकेश्वर बना दिया। वानरोंने समुद्रपर पुल बाँध खड़ा किया और लंकामें सुबेल पर्वतपर डेरा डालकर राक्षसोंसे युद्ध छेड़ दिया। उस लड़ाई में रामके हाथसे कुम्भकर्ण मार डाला गया, लक्ष्मणके हाथसे मेघनाद और अन्तमें भयंकर युद्धके पश्चात् रामके हाथसे रावण भी मार डाला गया।

अग्निमें सीताको शुद्ध पाकर वहाँसे सुग्रीव-विभीषणके साथ राम पुष्पक विमानपर सीताको सब मार्गके स्थान दिखाते हुए अयोध्या जा पहुँचे जहाँ भरत-शत्रुघ्न-वशिष्ठने उनका बड़ा स्वागत किया। रामने विमानको तो कुबेरके पास भेज दिया और वशिष्ठने उनका विधिपूर्वक अभिषेक कर दिया। ॥

कविवर मुरारिविरचित अनर्घराघव नाटककी रामायण-कथा पूर्ण।

***

19वीं शती में जब स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष जोर दिया जा रहा था तब हिन्दी भाषा के माध्यम से अनेक रोचक ग्रन्थों की रचना हुई, जिनमें कहानियों के माध्यम से महत्त्वपूर्ण बातें बतलायी गयी। ऐसे ग्रन्थों में से एक 'रीतिरत्नाकर' का प्रकाशन 1872ई. में हुआ। उपन्यास की शैली में लिखी इस पुस्तक के रचयिता रामप्रसाद तिवारी हैं।

इस पुस्तक में एक प्रसंग आया है कि किसी अंगरेज अधिकारी की पत्नी अपने बंगला पर आसपास की पढ़ी लिखी स्त्रियों को बुलाकर उनसे बातचीत कर अपना मन बहला रही है। साथ ही भारतीय संस्कृति के विषय में उनसे जानकारी ले रही है। इसी वार्ता मंडली में वर्ष भर के त्योंहारों का प्रसंग आता है। पण्डित शुक्लाजी की पत्नी शुक्लानीजी व्रतों और त्योहरों का परिचय देने के लिए अपनी दो चेलिन रंगीला और छबीला को आदेश देतीं हैं।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यह ग्रन्थ अवध प्रान्त के सांस्कृतिक परिवेश में लिखा गया है। इसमें अनेक जगहों पर बंगाल प्रेसिडेंसी को अलग माना गया है।

सन् 1872 ई. के प्रकाशित इस ग्रन्थ की हिन्दी भाषा में बहुत अन्तर तो नहीं है किन्तु विराम, अल्प विराम आदि चिह्नों का प्रयोग नहीं हुआ है जिसके कारण अनेक स्थलों पर आधुनिक हिन्दी के पाठकों को पढ़ने में असुविधा होगी। इसलिए यहाँ भाषा एवं वर्तनी को हू-ब-हू रखते हुए विराम-चिह्नों का प्रयोग कर यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। पाठकों की सुविधा के लिए कुछ स्थलों पर अनुच्छेद परिवर्तन भी किए गये हैं। जिन शोधार्थियों को भाषा-शैली पर विमर्श करना हो, उन्हें मूल प्रकाशित पुस्तक देखना चाहिए, जो Rīitiratnākara के नाम से ऑनलाइन उपलब्ध है।

19वीं शती की कृति 'रीतिरत्नाकर' में पर्व-त्योहारों का विवरण

गतांक से आगे...

कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा में चिरैयागौर

इसके अंतर रंगीला बोली कि छबीला बहिन क्या देखती हो अब तो मेम साहिब का संदेह भी निवृत्त हो गया और तुम्हें अवश्य कहना पड़ेगा तो आगे क्यों नहीं बढ़ती।

छबीला बोली कि बहिन आगे क्या बढ़ अभी तो इसी में एक बात कहने को पड़ी है जैसे कातिक शुदि पड़वा को कहीं कहीं गाय की पूजा होती है, जिसका बर्णन ऊपर कर चुकी हूं। उसी तिथि को स्त्रियों में **चिरैयागौर** का व्रत होता है। सब स्त्री लोग भूखी रहती हैं भीत में गेरू से चिरैयागौर बनाती हैं और चाउर के आटे में घी शक्कर मिलाके एक चिरैया बनाती हैं उसी पर दिया जला के पूजा करती हैं जब पूजा अर्चा में निश्चिन्ताई होती है तो प्रथम उसी आटे की चिरैया को खाइ के तो दूसरी बस्तु खाती हैं।

यमद्वितीया

इसके पीछे यमद्वितीया होती है जिसको सब लोग भैया दूज कहते हैं इस ब्रत में स्त्री लोग भाई के आयुर्वल की वृद्धि के लिये ब्रत रहती हैं और आठ चिरंजीवों की पूजा करती हैं, जैसे 1 मार्कण्डेय 2 राजाबलि 3 व्यास 4 हनुमान 5 बिभीषण 6 कृपाचार्य 9 द्रोणाचार्य 8 परशुराम।

यहां शोचने की बात है कि लोग उसी को चिरंजीव समझते हैं जो अपने शरीर से बना रहे चिरंजीव होने और नाम बने रहने का जो मुख्य हेतु हे उसको कम लोग जानते हैं शरीर के बने रहने से मनुष्य चिरंजीव नहीं हो सक्ता जब तक उसका कर्म चिरंजीव न हो आज कल कितने राजा लोग शरीर से विद्यमान हैं परंतु उनका नाम देश में कोई नहीं जानता पूर्व काल के धर्मशील राजाओं का नाम जिनको मरे कई सहस्र बर्ष बीत गये अब तक बना है तो उनको चिरंजीव समझना चाहिये क्योंकि विद्वान और बुद्धिमान लोग उन्हीं को अजर अमर और चिरंज व समझते हैं जिनकी कीर्ति और यश अजर अमर हो इसी प्रकार इन आठ चिरंजीवों के अच्छे-अच्छे कर्म चिरंजीव हैं, जैसे मार्कण्डेय का तप और राजाबलि का राजनीति से प्रजापालन और व्यास की कविता और हनुमान की स्वामिभक्ति और बीरता और परशुराम का शत्रुनिग्रह और अद्भुत विक्रम आदि कर्म चिरंजीव हैं।

यम-द्वितीया के दिन यमुना न्हान

यम-द्वितीया को सब लोग बहिन की बनाई हुई रसोई जीमते हैं और उसको रूपया पैसा कपड़ा आदि बस्तु देकर प्रसन्न करते हैं और यमुना नहाते हैं। इस तिथि का नाम यमद्वितीया इससे हुआ कि पूर्वकाल में यम की बहिन यमुना ने अपने भाई यम को अपने घर में भोजन बना के जिमाया था तभी से यह रीति प्रचलित हो गई है और इसीदिन कायस्थ लोग लेखनी और मसियानी समेत **चित्रगुप्त की पूजा** करते हैं।

तुलसी विवाह

कार्तिक शुदि नवमी से लेकर एकादशी तक बहुत-सी स्त्रियां व्रत रहती हैं और **तुलसी बिरवा के साथ ठाकुर का व्याह** करती हैं और सम्पूर्ण व्याह की रीति भांति बनती हैं।

भीष्मपंचक व्रत

कातिक शुदि दशमी से लेकर पूर्णिमासी तक **भीष्मपंचक ब्रत** होता है जो लोग कार्तिक भर प्रातस्नान करते हैं, वही इस ब्रत को भी रहते हैं और भीष्म के नाम अर्घ देते हैं। देखो, धर्मशील होने और शुभ आचरण करने से ऐसा सुयश होता है। बहुत लोग ऐसे होते हैं कि मरने के पीछे फिर कोई उनका नाम नहीं लेता और पानी पिंड का देना कैसा और भीष्म राजा शंतनु का पुत्र था, जिसको मरे चार सहस्र वर्ष से अधिक हो गये, परंतु वह ऐसा बाल ब्रह्मचारी और परम शूरबीर रणधीर धर्मशील प्रजापालक और कछगांगेय करके प्रसिद्ध था कि जो शब्द अब भी अच्छे लोगों की प्रसंशा में कहा जाता है कि "अमुक मनुष्य बड़ा कांछगंगेयी है" और भीष्म के नाम से लोग तर्पण करते हैं।

इससे पाया जाता है कि पहिले इस देश में अच्छे-अच्छे शुभ आचरण पर ध्यान और आदर होता था। आजकल के समान तब के लोग न थे कि छल-कपट से मुकदमा थे जीतने और झूठी गवाही देने को बड़ाई समझे।

इन बातों के स्थापित करने का प्रयोजन यही था कि जिससे लोग आगंतुक सुयश के लिये अच्छे कामों

"यह नियम बांध दिया गया है कि जब तक कातिक के उजियाले पाख की एकादशी न होले, तब तक नवीन बस्तु न खाना चाहिये। अर्थात् एकादशी से सब बस्तु पक जाती हैं तब से सब लोग सब बस्तु को खाने पीने लगते हैं।"

में रुचि बढ़ावें और इस हेत से नहीं नियत हुआ कि चार पांच दिन भूखों मरें और मुख्य तत्त्व को न समझे। पूर्व समय के विद्वानों की बुद्धि की बड़ाई है कि अच्छे लोगों के नाम ठहराने के प्रयोजन से एक न एक रीत प्रचलित कर दी है।

इससे पाया जाता है कि पहिले इस देश में अच्छे-अच्छे शुभ आचरण पर ध्यान और आदर होता था। आजकल के समान तब के लोग न थे कि छल-कपट से मुकदमा थे जीतने और झूठी गवाही देने को बड़ाई समझे।

देवोत्थान एकादशी

कातिक शुदि एकादशी को देवउठानी एकादशी होती है, जिसको गांववाले बिगाड़ के डिठवन बोलते हैं। इस एकादशी को छोटे बड़े सब ब्रती रहते हैं। स्त्री लोग चाउर पीस के आंगन में चौक देती हैं और रामजी का गोठिया बनाती हैं और घर-घर पंडित जाके देव उठाने के समय संस्कृत में यह कहता है कि "आकाश निर्मल हो गया और सब बादर हट गये और सब दिशा खुल गई और शरद ऋतु के फूल फूलने लगे, इसलिये हे परमेश्वर, तुम जागो।" इसी जागने के अर्थ से इस एकादशी को प्रवोधिनी कहते हैं अर्थात जगानेवाली इस एकादशी के दिन सम्पूर्ण नया नया पदार्थ लाके ठाकुर को चढ़ाते हैं, फिर इसी दिन से सब बस्तु को खाने-पीने लगते हैं जैसे ईख, बैगन आदि।

यह स्थल विचारांश के योग्य है कि चौमासे में सब बस्तु कच्ची और रसहीन रहती हैं इसलिये यह नियम बांध दिया गया है कि जब तक कातिक के उजियाले पाख की एकादशी न होले, तब तक नवीन बस्तु न खाना चाहिये। अर्थात् एकादशी से सब बस्तु पक जाती हैं तब से सब लोग सब बस्तु को खाने पीने लगते हैं।

आँवले के पेड़ के नीचे भोजन करने की परम्परा

कातिक में बहुधा लोग आंवले के पेड़ के नीचे जेवनार बनाके खाते और ब्राह्मण को जिमाते हैं प्रयाग में **आखानवमी** को तीर्थ की परिक्रमा का मेला होता है और कर्नेलगंज में भारद्वाज के मन्दिर पर संध्या की जून बड़ी भीड़ होती है और लोग आरती करते हैं और कातिक की पूर्णिमासी को अयोध्या और चित्रकूट में बड़ा में भारी मेला होता है और पुष्करतीर्थ में भी बहुत लोग स्नान करने को आते हैं।

अगहन के पर्व-त्योहारों का विवरण

छबीला बोली– सुनो, रंगीला बहिन! अब में झट पट अगहन का समाचार कहती हूं, क्योंकि यह कहावत प्रसिद्ध है कि **अगहन हांड़ी का अदहन** अर्थात् रोटी बनाते बनाते दिन बीत जाता है। अगहन शुदि अष्टमी को **कालाष्टमी** होती है। इसी दिन कालभैरव का जन्म हुआ है। इस ब्रत का प्रचार विशेष कर काशी में होता है और अगहन शुदि पंचमी को भी श्रावण की नागपंचमी के समान कहीं-कहीं सपों की पूजा होती है। नागों के पूजने का हेतु केवल डर जान पड़ता है, क्योंकि सर्प बड़े दुःखदाई होते हैं। लोगों ने यह समझा होगा कि जो हम

इनकी पूजा करेंगे तो यह न काटगे। जान पड़ता है कि जिसने इस रीति को प्रचलित किया है, वह नीतिशास्त्र में निपुण न था, क्योंकि नागों की पूजा के दिन धाने का लावा और दूध उसके पीने के लिये रख आते हैं और नीति हैं में लिखा है–

पयःपानं भुजंगानां केवलं विषवर्द्धनम्

अर्थात् सपों को दूध पिलाने से केवल विष की वृद्धि होती है, परंतु यह बात विद्वानों के समझने के योग्य है।

अगहन शुदि छठि **स्कन्दकुमार के जन्म का दिन** है, इसको चंपाषष्टी कहते हैं। यह ब्रत महाराष्ट्र देश में प्रसिद्ध है।

अगहन की पूर्णिमासी को कहीं-कहीं विरक्तों की समुदाय में उत्साह होता है इसलिये कि उस दिन दत्तात्रेय योगीश्वर ने जन्म लिया है।

अंगहन में कहीं-कहीं व्याह होते हैं परंतु गोना बहुत अधिक होता है।

पूस के त्योहारों का विवरण

छबीला बोली कि सुनो रंगीला बहिन, *पूस काना टूस* न इस में कोई विशेष ब्रत हो और न कोई मंगलकार्य जान पड़ता है कि पूस के तुसार ने पूर्व समय के आचार्यों को ऐसा सताया था कि वह बेचारे मारे जाड़े के चुपचाप बैठ रहे हैं कोई ब्रत नहीं चला सके।

पूस शुदि द्वादशी को एक सुरूपा द्वादशी का ब्रत होता है। उस में तिल और सोने की प्रतिमा का दान लिखा है, परंतु इसका प्रचार कहीं नहीं देखने में आता, परंतु तो भी इस देश की स्त्रियों को तिथि त्यौहार में बड़ी प्रीति है। जब उन्होंने देखा कि पंडित लोग पूस में कोई त्यौहार नहीं बतलाते तो वह लोग पूस में एतवार का ब्रत रहकर कुछ पूजा करती और कहती हैं कि यह पूसारानी देवी की पूजा है।

माघ के त्योहार

इसके उपरांत मकर की संक्रांति होती है, उसको सब लोग खिचड़ी कहते हैं इसलिये कि उस में खिचड़ी और तिल का दान होता है। यह त्यौहार कभी दो चार दिन पूस रहे वा दो चार दिन माघ लगे होता है उस दिन गंगा के तीरे विशेषकर प्रयाग में यात्रियों की बड़ी भीड़ होती है छबीला बोली कि सुनो रंगीला बहिन माघ में थोड़ा थोड़ा दिन बढ़ता हे जैसी कहावत प्रसिद्ध है कि **"माघ तिले तिल बाढ़े फागुन गोड़ा काढ़े।"**

माघ में बहुत-सी बिधवा स्त्रियां प्रात न्हाती हैं मूली नहीं खाती और खिचड़ी और तिल का दान देती हैं।

गणेश-चौथ

माघ में सब से प्रथम गनेशचौथ होती है। चौथ के दिन पुत्रवती स्त्री ब्रत रहती हैं। तिल और गुड़ मिला के तिलकुट का पहाड़ बनाती हैं और सकरकन्द और फूल पान और ईख और बेर सुपारी पैसा आदि लेके पूजा करती हैं और कहीं-कहीं स्त्री लोग पीढ़ा के ऊपर घी का गनेश बनाके पूजती हैं। जब चंद्रमा उदय होता है तब सब स्त्रियाँ पूजा से निश्चिन्त होके सकरकन्द और दूध और तिलवा का फलाहार करती हैं और दूसरे दिन थोड़ा तिलवा और सकरकन्द प्रजाओं को देती हैं और भाई बंधु के यहां परस्पर बायन भेजती हैं। इस चौथ का नाम संकष्ट चतुर्थी है।

षट्तिला व्रत

फिर माघ शुदि एकादशी को षट्तिला व्रत होता है इस दिन तिल के साथ छः काम करते हैं इसी से इसको षट्तिला कहते हैं अर्थात्

- तिल को जल में डाल के नहाना 1
- और तिल का लेपन करना 2
- और तिल का होम करना 3
- और तिल के साथ पितरों को पानी देना 4
- और तिल आप खाना 5
- और तिल का दान देना 6

माघ में तिल के बर्ताव और दान की रीति जो प्रजलित हुई है, सो बड़ी बुद्धिमानी के साथ हुई है। माघ में शीत की बहुत अधिकता रहती है और भूना हुआ तिल और गुड़ गरम होता है तो इसके सेवन से शीत का बड़ा बचाव रहता है। माघ की मावश्या को प्रयाग में बड़ा मेला होता है यद्यपि नहावन तो महीना भर रहता है परंतु तीन चार पर्व में बड़े भारी मेले होते हैं जैसे संक्रांति मावस बसंतपंचमी अचलासप्तमी पूर्णिमासी को परंतु यह मेला अब कई कारणों से दिन प्रति दिन कम होता जाता है जैसा पहिले देश देशान्तर के व्यापारी आते थे उसकी अपेक्षा अब कुछ नहीं आते।

वसन्त-पंचमी

फिर माघ शुदि पंचमी को बसंत पंचमी होती है उस दिन लक्ष्मी की पूजा और वसंत का उत्सव किया जाता है इसी दिन से श्रीमानों और बड़े-बड़े धनियों के यहां राग रंग का आरंभ होता है। भाट भिखारी लोग सब को आम का बौर सगुन की भांति दिखाते और वसंत ऋतु का आगम जनाते हैं और पैसा रुपया पाते हैं। इसी दिन से सब लड़के लोग होलिका रखने का आरंभ करते हैं।

अचला सप्तमी

फिर माघ शुदि सप्तमी को अचलासप्तमी होती है उस दिन सब लोग गंगा नहाते हैं फिर उसके दूसरे दिन भीष्माष्टमी होती है उस दिन भीष्म पितामह के नाम बहुत से लोग तर्पण करते हैं फिर माघ की पूर्णिमासी को त्रिवेनी के तट पर सब दीपदान करते हैं। (पृ. 140)

***

यम-पट एवं यम-गाथा

मुद्राराक्षस नाटक के पहले अंक में ही एक स्थल पर वर्णन आया है कि चाणक्य के द्वारा पाटलिपुत्र में राक्षस के गुप्तावास का पता लगाने के लिए जो गुप्तचर घूम रहा है, वह यम-पट दिखाकर यम-गाथा गाने का कार्य करता है। इसका अर्थ है कि यमगाथा गाने वाले असली लोग भी बहुत थे, दिन में कई बार एक स्थान पर आते रहते थे। लोगों के लिए यह सामान्य बात थी इसलिए गुप्तचर ने भी यह विधि अपनायी ताकि किसी को संदेह न हो। यहाँ हमें दे यम गाथाएँ मिलतीं हैं, जिनकी मूल भाषा प्राकृत है-

चरः- पणमह जमस्स चलणे किं कज्जं देवएहि अण्णेहिं। एसो खु अण्णभत्ताण हरइ जीअं चडपडन्तम्॥१७॥

अवि अ।

पुरिसस्स जीविदव्वं विसमादो होइ भत्तिगहिआदो। मारेइ सव्वलोअं जो तेण जमेण जीआमो॥१८॥

अर्थात् यमराज के चरणों में प्रणाम करो! अन्य देवताओं को पूजने से क्या लाभ?क्योंकि अन्य देवताओं के उपासकों के प्राण भी यमराज हर कर ले जाते हैं। और भी, हम सब की जिन्दगी सदैव इस भयंकर यमराज की भक्ति पर निर्भर करती है। वहीं यम जो प्राणिमात्र के लिए मृत्यु है- हमारे जीवन का आधार है।

***

पुस्तक समीक्षा

प्रवचन। लेखक- मार्कण्डेय शारदेय। प्रकाशक- सर्व भाषा प्रकाशन, J-49, स्ट्रीट सं. 38, राजापुरी, मेनरोड, नई दिल्ली। प्रथम संस्करण : 2022. कुल पृष्ठ संख्या : 178+10. पेपरबैक, मूल्य 350 रुपये. ISBN : 978-93-95291-00-2

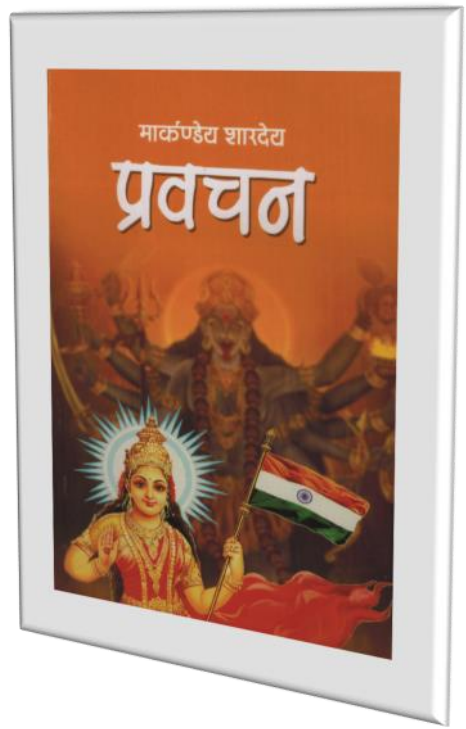

आलोच्य कृति प्रवचन को यदि 'शास्त्रीय उपन्यास' के रूप में देखा जाये तो कोई अनुचित नहीं। इसमें हमें कथात्मक सामग्री भी मिलती है और शाक्तागम सम्बन्धी गम्भीर शास्त्रीय विमर्श भी। वस्तुतः कृतिकार ने शास्त्रीय विमर्श को रोचक बनाने के लिए कथात्मकता का सहारा लिया है। इसलिए कृति की कथात्मकता इसका शिल्प है, कथ्य नहीं।

पटना के नामी सेठ रामावतारजी का छोटा पुत्र शुभ्रांशु विवाह के आठ वर्ष के बाद भी पिता नहीं बन सका है, तो सेठजी स्वयं प्रसिद्ध ज्योतिषी माधवानन्दजी के पास पहुँचते हैं। माधवानन्दजी योग्य तथा गम्भीर ज्योतिषी हैं वे उन्हें शतचण्डी यज्ञ आयोजित करने की सलाह देते हैं। एक आदर्श सनातनी एवं श्रद्धालु सेठजी अपनी स्वीकृति दे देते हैं। सेठजी का परिवार भी विशुद्ध उच्च आदर्शों वाला सनातनी है। उनके संयुक्त परिवार के सभी लोग सेठजी के प्रस्ताव पर अपनी सहमति देते हैं। कृतिकार ने यहाँ एक आदर्श परिवार का जो चित्रण किया है वह अपने आप में पाठकों के लिए पथ-प्रदर्शक है।

यज्ञ आरम्भ होता है। सेठजी के कुल पुरोहित सभी पण्डितों का चयन करते हैं। प्रवचन हेतु उच्च कोटि के विद्वान् को व्यास आमन्त्रित करते हैं। यज्ञ आरम्भ होता है और उसी के साथ प्रवचन आरम्भ होता है।

सम्पूर्ण कृति पाँच दिनों में विभक्त है तथा कुल मिलाकर 81 अवान्तर विभाजन हैं, जो किसी न किसी स्वाभाविक प्रासंगिक कथा से आरम्भ होता है। कुल 11 पण्डित एक साथ भोजन करते हैं तो स्वाभाविक है, प्रवचन के अतिरिक्त समय में भी शास्त्रचर्चा तो होगी ही। बंगाली में एक कविता है–

"घोड़ार घोड़ार मिलन हये, चलिबो दुटी लात।
पण्डित पण्डित मिलन हये चलिबो दुटी बात।"

जब घोड़े मिलते हैं तो दुलत्तियाँ चलतीं हैं, पण्डित मिलते हैं तो शास्त्रचर्चा होती है।

स्वाभाविक रूप से कृतिकार ने इनके बीच हँसी-मजाक का उल्लेख किया है, लेकिन मर्यादा यह है कि पाठक के लिए वे हँसी-मजाक भी सीख दे जाते हैं।

इसी क्रम में लेखक ने पौरोहित्य कर्म कराने वालों के उच्च संस्कार तथा वर्तमान सामाजिक परिवेश में उनकी दीनता के द्वन्द्व का भी बारीकी से उल्लेख किया है। विडम्बना है कि ब्राह्मण का बच्चा जब किसी लायक नहीं नहीं तो पुरोहिती तो कर ही लेता है न! इसलिए सेठ के पुरोहित जगदीश मिश्रजी के तीनों लड़के ने अपने बाबूजी से थोड़ी-बहुत खानदानी विद्या सीख ही ली थी। उनका बड़ा लड़का अंगरेजी से एम.ए. तथा छोटा भी एम.ए. करने के बाद अर्थोपार्जन के लिए सत्यनारायण पूजा, तीजपूजा आदि कराने जाया करते हैं। **पढऽ बेटा! चण्डिका जेसे चढ़ो हण्डिका**– इस कहावत को वे साकार करते हैं। स्वयं जगदीश मिश्रजी सेठजी के बार-बार पूछने पर भी कोई खर्चीला अनुष्ठान आदि नहीं बता पाते हैं, क्योंकि उनके मन में एक अव्यक्त भय समाया हुआ है कि कहीं सेठ मुझे लालची न समझ ले। यह उच्च आदर्श और घोर आर्थिक संकट के बीच का द्वन्द्व है।

इस शतचण्डी यज्ञ के एक पाठक शारदानन्द झाजी पहले किसी विभाग में किरानी थे, छँटनीग्रस्त होकर अब एक मन्दिर में पुजारी है। ब्राह्मणों की यह अध्यवसाय सम्बन्धी विडम्बना को कृतिकार में बारीकी के साथ प्रस्तुत किया है, जो इसकी औपन्यासिकता के उपादान हैं।

व्यासपीठ पर शशिकान्तजी बैठ जाते हैं और तब आरम्भ होता है शाक्त-आगम का विमर्श। दुर्गासप्तशती, देवीभागवत तथा अन्य तन्त्र एवं आगम के ग्रन्थों से संस्कृत में मूल उद्धरणों के साथ प्रवचन आरम्भ होता है। व्यासजी दर्शकों से आग्रह करते हैं कि जिनके मन में जो शंका हो, लिखकर मेरे पास भेजें मैं सबका उत्तर दूँगा। और वास्तव में वे जिस गम्भीरता के साथ सरल शब्दों में विमर्श प्रस्तुत करते हैं वह प्रामाणिकता के साथ सामान्य पाठकों के लिए बोधगम्य हैं। देवी से सम्बन्धित विविध विषयों को वे बोधगम्य रूप में प्रस्तुत करते हैं। कथात्मकता के साथ शास्त्र की गम्भीरता इस कृति की अनन्य विशेषता है। जब उनके पास शूकर अवतार से सम्बन्धित प्रश्न आता है तो वे आधुनिक विकासवाद के सिद्धान्त के साथ पौराणिक अवतारवाद का सामंजस्य स्थापित करते हैं। इसी क्रम में कुमारी-पूजन का प्रसंग आता है तो व्यासजी कन्यादान का महत्त्व भी कहते हैं साथ ही, श्रोताओं से नारे लगबाते हैं– "हम कन्याभ्रूण की हत्या नहीं करेंगे।" "हम स्त्री-पुरुष में विभेद नहीं पालेंगे।" इस प्रकार कृतिकार न केवल सिद्धान्त की बात करते हैं बल्कि वर्तमान में आयी विडम्बनाओं को दूर करने की भी प्रेरणा देते हैं।

आज सनातन परम्पराओं पर विशेष रूप से पौराणिक देवी-देवताओं पर अनेक प्रकार के आक्षेप कर परम्परा को बदनाम करने का प्रयास किया जा रहा है। सरस्वती और ब्रह्मा को लेकर आपत्तिजनक टिप्पणियाँ की जा रही हैं। ऐसे दुष्प्रचारों का भी इस 'प्रवचन' के माध्यम से खण्डन किया गया है। व्यासपीठ पर बैठे शशिकान्तजी ने जिस गम्भीरता तथा प्रामाणिकता के साथ उन्नका खण्डन प्रस्तुत किया है तथा श्रोताओं को समझाया है, वह इस पुस्तक को सनातनी श्रद्धालुओं के द्वारा अनिवार्य रूप से पठनीय और मननीय बनाता है।

इस प्रकार, उपन्यास की शैली में लिखा गया यह शक्ति-पूजन की पौराणिक परम्परा का शास्त्रीय विमर्श पढ़ने में रोचक है। मूल उद्धरण के साथ होने के कारण प्रामाणिकता से भी भरपूर है। इसे शास्त्रीय उपन्यास की विधा के रूप में देखा जा सकता है। कृतिकार पण्डित मार्कण्डेय शारदेय को धन्यवाद!

***

महावीर मन्दिर समाचार

मन्दिर समाचार

(सितम्बर-अक्टूबर, 2022ई.)

महावीर मन्दिर में शारदीय नवरात्र में दुर्गापूजा का आयोजन, दिनांक 26 सितम्बर 2022 से 5 अक्टूबर, 2022ई.

मन्दिर के दूसरे तल्ले पर स्थित माँ दुर्गा की स्थायी प्रतिमा के के साथ साथ मन्दिर के प्रांगण में अस्थायी पण्डाल में मृण्मय प्रतिमा स्थापित कर दुर्गापूजा सम्पन्न हुई। ध्यातव्य है कि मन्दिर के एक गर्भगृह में दुर्गा की प्रतिमा स्थायी रूप से हैं, साथ ही बीस से अधिक वर्षों से प्रांगण में भी पण्डाल में अस्थायी मूर्ति की स्थापना कर पूजा होती रही है।

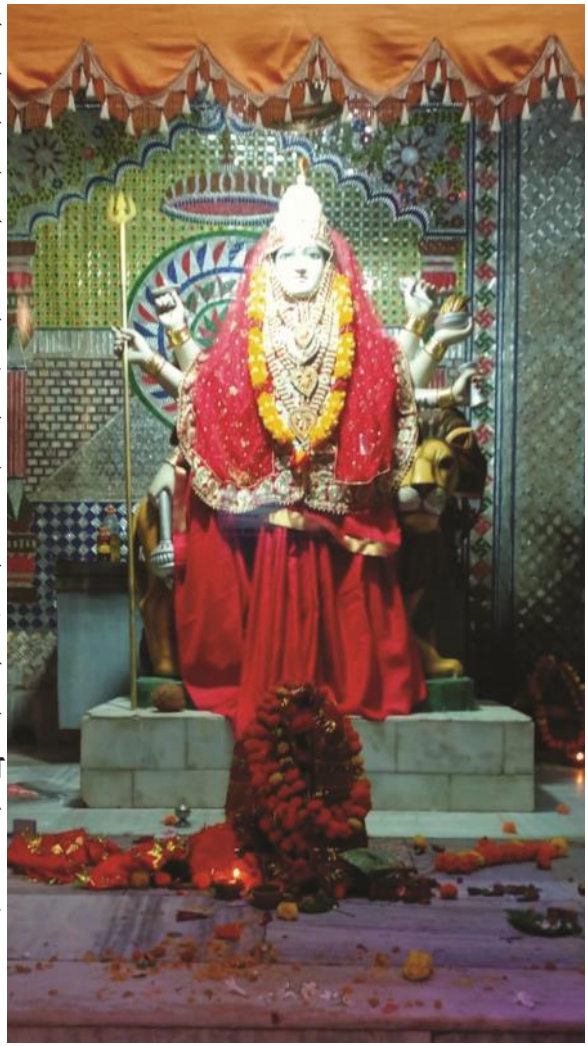

महावीर मन्दिर ने श्रद्धालुओं की सुविधा के के लिए एक योजना चलायी है कि जो अपने घर में कलश स्थापित कर पूजा नहीं कर पाते हैं, वे निर्धारित शुल्क 5100 रुपये जमाकर अपने नाम से संकल्प लेकर मन्दिर में कलश-स्थापना करते हैं। उनके नाम से संकल्प लेकर प्रतिदिन दुर्गासप्तशती के एक पाठ की व्यवस्था मन्दिर की ओर से की जाती है तथा उन्हें हवन के समय बुलाकर हवन में सम्मिलित कराया जाता है। बहुत श्रद्धालु इस योजना का लाभ उटाते हैं। **इसमें यजमान को स्वयं या उनके प्रतिनिधि को कलशस्थापना के दिन तथा हवन के दिन सदेह उपस्थित होना आवश्यक होता है।**

इस वर्ष भी इन दोनों स्थानों पर मन्दिर परिसर में विधिवत् पूजा अर्चना सम्पन्न हुई।

व्रत पर्व

कार्त्तिक मास, विक्रम संवत् 2079
(10 अक्टूबर से 08 नवम्बर 2022 ई-)

पं. मुक्ति कुमार झा
ज्यौतिष परामर्शदाता, महावीर ज्योतिष मण्डप, महावीर मन्दिर, पटना

सूर्यग्रहण

दिनांक 25 अक्टूबर 2022 ई.।
स्पर्श- दिन में घं 04 मि. 42,
मोक्ष- सायं घं. 05 मि. 08

चन्द्रग्रहण

दिनांक 08 नवम्बर 2022 ई.।
स्पर्श- दिन में घं. 04 मि. 59,
मोक्ष- सायं घं. 06 मि. 20.

तुलासंक्रान्ति पुण्यकाल, सिमरिया में कल्पवास आरम्भ,

कार्त्तिक कृष्ण अष्टमी मंगलवार, दिनांक 18 अक्टूबर 2022 ई.।

धन्वन्तरि-जयन्ती, प्रदोष त्रयोदशी व्रत,

कार्त्तिक कृष्ण द्वादशी उपरान्त त्रयोदशी शनिवार, दिनांक 22 अक्टूबर 2022 ई.।

हनुमान-जयन्ती, प्रदोष चतुर्दशी व्रत,

कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी उपरान्त चतुर्दशी रविवार, दिनांक 23 अक्टूबर 2022 ई.।

दीपावली, लक्ष्मीपूजा, श्रीकालीपूजा, सोमवती अमावस्या,

कार्त्तिक कृष्ण चतुर्दशी उपरान्त अमावस्या सोमवार, दिनांक 24 अक्टूबर 2022 ई.।

स्नानदानादि अमावस्या,

कार्त्तिक कृष्ण अमावस्या मंगलवार, दिनांक 25 अक्टूबर 2022 ई.।

गोवर्द्धनपूजा, अन्नकूट,

कार्त्तिक शुक्ल प्रतिपदा बुधवार, दिनांक 26 अक्टूबर 2022 ई.।

भ्रातृद्वितीया, श्रीचित्रगुप्तपूजा, छठ व्रत पर्व का माछ-मरूवा-वर्जित,

कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया गुरुवार, दिनांक 27 अक्टूबर 2022 ई-।

श्रीगणेश चतुर्थी व्रत, छठ व्रत पर्व का अरवा-अरबाइन,

कार्त्तिकशुक्ल तृतीया उपरि चतुर्थी शुक्रवार, दिनांक 28 अक्टूबर 2022 ई.।

छठ व्रत पर्व का खरना,

कार्त्तिकशुक्ल चतुर्थी उपरि पंचमी शनिवार, दिनांक 29 अक्टूबर 2022 ई.।

छठ व्रत पर्व का सन्ध्याकालिक अर्घ्यदान,

कार्त्तिकशुक्ल पंचमी उपरि षष्ठी रविवार, दिनांक 30 अक्टूबर 2022 ई.।

छठ व्रत पर्व का प्रातःकालिक अर्घ्यदान, पारण एवं सामापूजा आरम्भ,

कार्त्तिकशुक्ल सप्तमी सोमवार, दिनांक 31 अक्टूबर 2022 ई.।

गोपाष्टमी,

कार्त्तिकशुक्ल अष्टमी मंगलवार, दिनांक 01 नवम्बर 2022 ई.।

अक्षयनवमी, गंगास्नानदान,

कार्त्तिकशुक्ल नवमी बुधवार, दिनांक 02 नवम्बर 2022 ई.।

देवोत्थान एकादशी व्रत, (सबके लिए),

कार्त्तिकशुक्ल एकादशी शुक्रवार, दिनांक 04 नवम्बर 2022 ई.।

तुलसी विवाह, प्रदोष त्रयोदशी व्रत,

कार्त्तिकशुक्ल द्वादशी शनिवार, दिनांक 05 नवम्बर 2022 ई.।

विद्यापति स्मृति दिवस, प्रदोष चतुर्दशी व्रत,

कार्त्तिकशुक्ल त्रयोदशी उपरि चतुर्दशी रविवार, दिनांक 06 नवम्बर 2022 ई.।

पूर्णिमा व्रत, सामाविसर्जन (मिथिला में),

कार्त्तिकशुक्ल चतुर्दशी उपरि पूर्णिमा सोमवार, दिनांक 07 नवम्बर 2022 ई.।

गंगास्नान-दानादि पूर्णिमा, गुरु नानकजयन्ती, निम्बार्क-जयन्ती, सोनपुरमेला, हरिहरक्षेत्रस्नान,

कार्त्तिकशुक्ल पूर्णिमा मंगलवार, दिनांक 08 नवम्बर 2022 ई.।

***

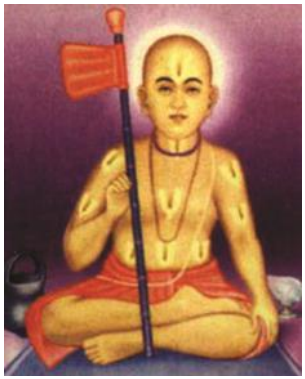

रामावत संगत से जुड़ें

1) रामानन्दाचार्यजी द्वारा स्थापित सम्प्रदाय का नाम रामावत सम्प्रदाय था। रामानन्द-सम्प्रदाय में साधु और गृहस्थ दोनों होते हैं। किन्तु यह रामावत संगत गृहस्थों के लिए है। रामानन्दाचार्यजी का उद्घोष वाक्य– 'जात-पाँत पूछ नहीं कोय। हरि को भजै सो हरि को होय' इसका मूल सिद्धान्त है।

2) इस रामावत संगत में यद्यपि सभी प्रमुख देवताओं की पूजा होगी, किन्तु ध्येय देव के रूप में सीताजी, रामजी एवं हनुमानजी होंगे। हनुमानजी को रुद्रावतार मानने के कारण शिव, पार्वती और गणेश की भी पूजा श्रद्धापूर्वक की जायेगी। राम विष्णु भगवान् के अवतार हैं, अतः विष्णु भगवान् और उनके सभी अवतारों के प्रति अतिशय श्रद्धाभाव रखते हुए उनकी भी पूजा होगी। श्रीराम सूर्यवंशी हैं, अतः सूर्य की भी पूजा पूरी श्रद्धा के साथ होगी।

3) इस रामावत-संगत में वेद, उपनिषद् से लेकर भागवत एवं अन्य पुराणों का नियमित अनुशीलन होगा, किन्तु गेय ग्रन्थ के रूप में रामायण (वाल्मीकि, अध्यात्म एवं रामचरितमानस) एवं गीता को सर्वोपरि स्थान मिलेगा। 'जय सियाराम जय हनुमान, संकटमोचन कृपानिधान' प्रमुख गेय पद होगा।

4) इस संगत के सदस्यों के लिए मांसाहार, मद्यपान, परस्त्री-गमन एवं परद्रव्य-हरण का निषेध रहेगा। रामावत संगत का हर सदस्य परोपकार को प्रवृत्त होगा एवं परपीड़न से बचेगा। हर दिन कम-से-कम एक नेक कार्य करने का प्रयास हर सदस्य करेगा।

5) भगवान् को तुलसी या वैजयन्ती की माला बहुत प्रिय है अतः भक्तगण को इसे धारण करना चाहिए। विकल्प में रुद्राक्ष की माला का भी धारण किया जा सकता है। ऊर्ध्वपुण्ड्र या ललाट पर सिन्दूरी लाल टीका (गोलाकार में) करना चाहिए। पूर्व से धारित तिलक, माला आदि पूर्ववत् रहेंगे। स्त्रियाँ मंगलसूत्र-जैसे मांगलिक हार पहनेंगी, किन्तु स्त्री या पुरुष अनावश्यक आडम्बर या धन का प्रदर्शन नहीं करेंगे।

6) स्त्री या पुरुष एक दूसरे से मिलते समय राम-राम, जय सियाराम, जय सीताराम, हरि -जैसे शब्दों से सम्बोधन करेंगे और हाथ मिलाने की जगह करबद्ध रूप से प्रणाम करेंगें।।

7) रामावत संगत में मन्त्र-दीक्षा की अनूठी परम्परा होगी। जिस भक्त को जिस देवता के मन्त्र से दीक्षित होना है, उस देवता के कुछ मन्त्र लिखकर पात्र में रखे जायेंगे। आरती के पूर्व गीता के निम्नलिखित श्लोक द्वारा भक्त का संकल्प कराने के बाद उस पात्र को हनुमानजीके गर्भगृह में रखा जायेगा।

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।। (गीता, 2.7)

8) आरती के बाद उस भक्त से मन्त्र लिखे पुर्जा में से कोई एक पुर्जा निकालने को कहा जायेगा। भक्त जो पुर्जा निकालेगा, वही उस भक्त का जाप्य-मन्त्र होगा। मन्दिर के पण्डित उस मन्त्र का अर्थ और प्रसंग बतला देंगे, बाद में उसके जप की विधि भी। वही उसकी मन्त्र-दीक्षा होगी। इस विधि में हनुमानजी परम-गुरु होंगे और वह मन्त्र उन्हीं के द्वारा प्रदत्त माना जायेगा। भक्त और भगवान् के बीच कोई अन्य नहीं होगा।

9) रामावत संगत से जुड़ने के लिए कोई शुल्क नहीं है। भक्ति के पथ पर चलते हुए सात्त्विक जीवन-यापन, समदृष्टि और परोपकार करते रहने का संकल्प-पत्र भरना ही दीक्षा-शुल्क है। आपको सिर्फ https://mahavirmandirpatna.org/Ramavat-sangat.html पर जाकर एक फार्म भरना होगा। मन्दिर से सम्पुष्टि मिलते ही आप इसके सदस्य बन जायेंगे।

***

हनुमानजी का भव्य पुष्प शृंगार। इसमें श्रद्धालुगण सामान्य दिनों में 5,500 एवं विशेष दिन में 11,000 रुपये की राशि जमा कर सहयोग देते रहते हैं। इस सहयोग में यजमान की सदेह उपस्थिति अनिवार्य नहीं। https://mahavirmandirpatna.org/rituals.php

*

पत्रिका-पंजीयन सं. 52257/90

विक्रम संवत् 2079 में प्रकाशित 'धर्मायण' के विशेषांक

सभी अंक ***online*** उपलब्ध हैं-

https://mahavirmandirpatna.org/dharmayan/

श्री महावीर स्थान न्यास समिति के लिए वीर बहादुर सिंह, महावीर मन्दिर, पटना- 800001 से ई-पत्रिका के रूप में https://mahavirmandirpatna.org/dharmayan/ पर निःशुल्क वितरित। सम्पादक : भवनाथ झा।